अनौपचारिका

समकालीन शिक्षा-चिन्तन की मासिक पत्रिका



वर्ष : 51 अंक : 6 ज्येष्ठ-आषाढ़ वि.सं. 2081 जून, 2024 सहयोग राशि- अठारह रुपये पृष्ठ-28 RNI 43602/77 ISSN No.2581-981x

छोटे अखबार की बड़ी आशा

छोटे अखबार निकालना आसान नहीं होता है। निकाल लिया तो उसे नियमित लंबे समय तक चलाने में कमर टूट जाती है। मगर पुरुषों की बहुलता वाले पत्रकारिता जगत में आशा पटेल अपने दो अखबार 'गरीबों का सेतु' और 'वाणिज्य सेतु' दशकों से अपने दम-खम से निकाल रही हैं। जयप्रकाश नारायण के आंदोलन में तप कर निकली आशा पटेल के जुझारू व्यक्तित्व का उनके साथियों ने और परिचितों ने पिछले दिनों राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति में एक अत्यंत आत्मीय समागम में इस्तकबाल किया।

मौका था उन पर निकले समग्र ग्रंथ 'आशा-सेतु' के विमोचन का जिसमें पत्रकारिता जगत के ही नहीं अन्य साहित्यिक और कला विधाओं के प्रमुख लोगों की बड़ी संख्या में मौजूदगी यह साबित कर रही थी कि उनका कितना आदर है। कृष्ण कल्कि द्वारा सुघड़ता से संपादित 'आशा-सेतु' में आशा पटेल के जीवन के अनेक आयाम उद्घाटित हुए हैं।

जलसे की अध्यक्षता करते हुए वरिष्ठतम पत्रकार प्रवीण चंद्र छाबड़ा ने तालियों के बीच कहा कि जुझारू आशा विरोध नहीं विद्रोह है। समारोह में आशा जी के पति खांटी पत्रकार सुधेंदु पटेल जो एक समय समिति में प्रकाशन के प्रभारी रह चुके हैं, भी दमकते हुए अतिथियों के स्वागत में तत्पर थे।

आशा जी को बधाई देने वालों की लंबी फेहरिस्त में से कुछ थे पत्रकारिता विश्व विद्यालय के दो पूर्व कुलपति ओम थानवी तथा सनी सेबेस्टियन, वरिष्ठ पत्रकार महेश शर्मा व गुलाब बत्रा, जनसंपर्क विधा के लक्ष्मण बोलिया, ख्यातनाम साहित्यकार दुर्गाप्रसाद अग्रवाल व प्रबोध कुमार गोविल, तथा मानवीय अस्मिता के लिए संघर्ष करने वाले आंग्ल कवि मोहम्मद हसन और जनसम्पर्क कर्मी-लेखक-कवि फारूक आफ़रीदी। ❑



मोबाइल फिल्म मेकिंग कार्यशाला

राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति में मई माह के पहले हफ्ते में किशोर किशोरियों के लिए तीन दिन की एक 'मोबाइल फिल्म मेकिंग वर्कशॉप' का आयोजन किया गया। वर्कशॉप का संचालन अभिषेक कुमावत और अरविन्द जोधा ने किया। वर्कशॉप में थियेटर शिक्षक मूमल तंवर ने प्रतिभागियों को अभिनय से अवगत कराया।



कार्यशाला आवासीय शिविर के रूप में थी जिसमें एक दर्जन से अधिक किशोर किशोरियां जयपुर की सामान्य बस्तियों से आये थे जिनके लिए इस तरह का यह पहला अनुभव था।

दो समूहों में विभक्त प्रतिभागियों ने मोबाइल से फिल्म बनाना सीखा ही नहीं बल्कि खुद लिखी और बनाई भी। कार्यशाला का समापन उनकी बनाई दो लघु फिल्मों के प्रदर्शन के साथ हुआ। ❑

वाणी

शिवमस्तु सर्वजगतः, परहितनिरता भवन्तु भूत गणाः ।
दोषाः प्रयांतु नाशं, सर्वत्र सुखी भवतु लोकः ।।

–जैन प्रतिक्रमण सूत्र

समस्त ब्रह्माण्ड का कल्याण हो; सभी प्राणी एक-दूसरे की भलाई में लगे रहें।
सारी कमज़ोरियाँ, बीमारियाँ और दोष कम हो जाएँ; सर्वत्र प्रत्येक व्यक्ति
हर प्रकार से स्वस्थ, शांतिपूर्ण और खुश रहे।दादू सिरजनहार के, केते नाम अनंत।

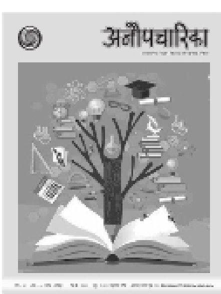
समानो मन्त्र: समिति: समानी समानं मन: सहचित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये व: समानेन वो हविषा जुहोमि।।
समानी व आकूति: समाना हृदयानि व:।
समानमस्तु वो मनो यथा व: सुसहासति।। ऋग्वेद

अनौपचारिका

समकालीन शिक्षा-चिन्तन की पत्रिका

वर्ष : 51 अंक : 6 ज्येष्ठ-आषाढ़ वि.सं. 2021 जून, 2024

क्र म



आवरण : शिक्षा–विज्ञान

राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति
7–ए, झालाना डूंगरी संस्थान क्षेत्र,
जयपुर–302004
फोन : 2700559, 2706709, 2707677
ई-मेल : raeajaipur@gmail.com

संरक्षक :
श्रीमती आशा बोथरा
संपादक :
राजेन्द्र बोड़ा
प्रबंध संपादक :
दिलीप शर्मा

संपादकीय

मिथकों वाले अतीत में लौटने का सुख

उम्र दराज लोगों में अपनी पुरानी यादों से घना मोह होता है। विगत में किए अपने कामों का उनका मोह इतना गहरा होता है कि वे मौजूदा काल के मुद्दों और समस्याओं का हल लुप्त हो चुके पुराने विचारों तथा परम्पराओं से ही करना चाहते हैं। वे अपने विगत से इतने व्यामोहित हुए रहते हैं कि नई सोच और समझ उन्हें न केवल उलझन भरी लगती हैं बल्कि अपनी सांस्कृतिक विरासत को ध्वंस करती भी लगती है। वे फिर-फिर अपने विगत में लौटते हैं और जो कर चुके हैं उसे ही दोहरा कर ही वे अपने अहं की तुष्टि करते हैं। अपने समय-काल में फ्रीज़ हो गये लगते हैं। यदि लोग ऐसा न करें तो शायद वे आज की परिस्थितियों में खुद अपने मन में अपनी पहचान न बनाये रखने का दंश झेलते रहें। विगत से मोह सुख देता है। खास कर उन लोगों को जो वर्तमान में अपने अतीत की हैसियत में जीना चाहते हैं। विगत की स्मृतियों की अपनी सत्ता होती है। अनेक बार वे किसी मनुष्य के अस्तित्व का पर्याय बन जाती हैं। वर्तमान समय में बिल्कुल बदला हुआ समाज है जिसके चारित्रिक और नैतिक व्यवहार हमारे पुरातन शास्त्रीय आदर्शों के विपरीत नज़र आते हैं। यह भी सच है कि भारतीय लोक हमेशा अपना व्यवहार खुद चुनता रहा है भले ही शास्त्र उसके आदर्श रहे हों।

हमें बीते हुए दिन बहुत अच्छे लगते हैं। खुद अपने ही दिन नहीं, पुराना जमाना भी। इसीलिए हर पीढ़ी के बुजुर्गवार यही कहते सुने जाते हैं कि हमारा ज़माना अच्छा था। बीते दिनों की तकलीफ़ों की यादें भी गुदगुदाती है और व्यक्ति उन्हें रस लेकर सुनाता है। शायद इसीलिए इतिहास हमें रिंझाता है। स्मृतियों को वर्तमान में प्रस्तुत करते हुए हर एक का अपना नज़रिया होता है। अनेक बार अतीत की ऐसी घटना स्मृति में अपना स्थान बना लेती है जो संभवतः वैसी हुई नहीं हो परंतु उसके नज़रिए से ऐसी होनी चाहिए थी। इसलिए कई बार ऐसा भी होता है कि एक ही घटना के दो साक्षी जब अपनी बात अहते हैं तो वह एक दूसरे से ध्रुव विरोधी होती है। अपनी पुरानी बातों और घटनाओं को याद करते हुए हम अपने मन में फिर जवान हो जाते हैं। इतिहास के पुनर्लेखन के आग्रह के पीछे विगत में हुई घटनाओं की स्मृतियों की हर एक के अपने सत्य के साथ नजदीकी बनाने की भावना ही होती है।

हम अतीत की यात्रा कई रूपों में करते हैं। एक तीर्थ यात्री के रूप में, एक पर्यटक के रूप में, एक रिपोर्टर के रूप में और एक इतिहासकार के रूप में। टीवी चैनलों पर रामायण, महाभारत और कृष्ण से संबन्धित सीरियलों के प्रसारण को देखने वालों के लिए भी हम

कह सकते हैं कि वे विगत की यात्रा पर जाते हैं। क्या वास्तविक है और क्या नकली है उसके बीच का अंतर इन सीरियलों को देखने वालों के लिए महत्वपूर्ण नहीं होता। एक प्रकार से इनके दर्शकों का अतीत में लौटना होता है। नए तकनीकी बाज़ार के युग में अनेकों टीवी चैनल व फिल्म निर्माता अपने दर्शकों को धार्मिक अस्थाओं के आधार पर नए-नए सीरियलों के जरिये दर्शकों को एक तरह से अतीत की तीर्थ यात्राओं पर ही ले जाते हैं। यह भी सच है कि जन संचार के माध्यम का उपयोग करते हुए बाजार के ये संस्थान एक दूरस्थ अतीत की मुफ्त यात्रा कराने की पेशकश कराने वाले मनोरंजन के लिए व्यक्ति को कुछ समय के लिए सिर्फ मजा देने से अधिक कुछ नहीं करते। इस मजे में अतीत को जानने की कोई जिज्ञासा नहीं होती। सिर्फ प्रथा और अनुष्ठान होता है, खोज और पूछताछ नहीं होती। जब जिज्ञासा नहीं होती तब व्यवहार हावी हो जाता है बाजार की ताकतों के पास ऐसे नये डिजिटल उपकरण हैं जिनसे वे लोगों को भरमा कर उनके के व्यवहार को अपने माफिक कर लेते हैं। लोग हमेशा भविष्य के लिए चिंतित रहते हैं और जब वर्तमान में कुछ नहीं कर पाते तो वे अतीत में लौट कर पुरातन को लेकर भविष्य संवारना चाहते हैं। इस व्यवहार का लाभ बाज़ार अपने प्रचार तंत्र से उठाता है।

हर एक का अपना अतीत है जो उसे प्यारा लगता है। उसे इसका कोई मतलब नहीं होता कि वह अतीत कितना सच है। इसलिए हर समुदाय का अतीत स्वर्णिम ही होता है। प्रत्येक स्वर्णिम अतीत का वारिस होना ही पसंद करता है। मुश्किल तब होती है जब वर्तमान को अतीत के सांचे में ढालने का प्रयत्न किया जाता है। इसे विचारधारा का नाम दे दिया जाता है। मगर वे यह भूल जाते हैं कि अतीत को लाकर वे वर्तमान को ध्वंस कर रहे हैं जिससे भविष्य के सुधरने की अपेक्षा कैसे की जा सकती है? ऐसे में रचनात्मक कल्पनाएं मुखर हो उठती है। इससे मिथक बनते हैं जिन पर लोक मुग्ध हुआ रहता है।

यह समय लगातार तेजी से बदलाव लाने वाली यंत्र तकनीक का है। पहले वर्षों में – या कहें पीढ़ियों में – यंत्र तकनीक का विकास और विस्तार होता था। आज हर पल हो रहा है। तेज बदलाव का दौर नई पीढ़ी के लिए भटकाव का सबब बन जाता और तो वह अतीत में लौटने को बेताब हो उठती है। ऐसी बेताबी का लाभ चतुर वर्चस्ववादी ताकतें उठाती हैं। यहां ऐसी शिक्षा की जरूरत महसूस होती है जिसमें इतिहास के विज्ञान को और मिथकों को समझ पाने में मदद मिले। आज की यही जरूरत है कि शिक्षा हमें अपने अतीत को जानने, समझने और अब तक जो जान लिया गया है उसे अंतिम सत्य नहीं मान कर ज्ञान की सतत खोज को जारी रखने के लिए तैयार करे। अतीत से मोह और अतीत का मोह में फर्क है। अतीत बांधता है तो समस्या करता है क्योंकि समय न तो रुकता है और न अपनी कोई निशानी छोड़ता है। वैज्ञानिक अब तक ब्रह्मांड के उदय का रहस्य नहीं खोज पाए हैं और ब्रह्मांड का एकीकृत सिद्धांत उनकी पकड़ में नहीं आ पा रहा। अतीत से प्रेम हो तथा उसकी इतनी गहरी समझ हो कि उसे आज पर थोपे बिना उसके अनुभव से अपने भविष्य को संवारने का रास्ता प्रशस्त करें ऐसी शिक्षा में ही सभी का शुभ है, मंगल है। ❑

बच्चों का बढ़ता स्क्रीन टाइम

❑



❑

नीलम अग्रवाल

लेखिका एक आंतरिक वास्तुकार हैं। साथ ही में वे परोपकार की भावनाओं वाली एक सजग गृहणी भी हैं। इस आलेख में वे आज के नौजवान अभिभावकों का ध्यान बच्चों को स्मार्टफोन की लत लगने की आ रही समस्या की तरफ ध्यान दिला रही है।❑ सं.

आज की दुनिया में जब सभी गैजेट्स का इस्तेमाल कर रहे हैं तो बच्चे भी इससे अछूते नहीं है. लेकिन विशेषज्ञ कहते हैं कि स्मार्टफोन का इस्तेमाल उनके विकास और सीखने की क्षमता को प्रभावित कर रहा है।

बच्चों के स्कूलों की छुट्टियां होने वाली हैं और उनकी माएं इस बात से जरूर परेशान होंगी कि वे अपने बच्चों को स्मार्टफोन से कैसे दूर रखें।

पढ़े लिखे मां बाप बच्चों को स्मार्टफोन से दूर रखने के लिए बहुत से उपाय करते हैं। जैसे कि बच्चों को बाजार से पेंटिंग बुक, कहानियों की किताबें, खिलौने और घर के अंदर खेले जाने वाले खेल खरीद कर देना। फिर भी किसी को यह भरोसा नहीं है कि उनके बच्चों का मन इन सब चीजों से बहल जाएगा और वे स्मार्टफोन की तरफ नहीं लपकेंगे।

क्योंकि वे जानते हैं कि बच्चे कुछ समय तक के लिए तो इन चीजों से खेल लेंगे लेकिन असल मुद्दा है कि बाकी का समय वे क्या करेंगे? खाने के वक्त खासकर बच्चों को मोबाइल देखने की जिद्द रहती है। अगर मोबाइल ना दो तो अनेक बच्चे बिसूर जाते हैं और खाना नहीं खाते हैं या रोने लगते हैं।

पेरेंट्स की चिंता है कि ज्यादा स्मार्टफोन देखने से कहीं उनके बच्चों की आंखें कमजोर न हो जाए। डॉक्टर स्मार्टफोन के इस्तेमाल से बच्चों के चश्मे लगने की चेतावनी पहले ही दे चुके हैं।

विभिन्न अध्ययनों से भी पता चलता है कि लंबे समय तक स्क्रीन के करीब रहने से छोटे बच्चों की कम्युनिकेशन और प्रॉब्लम सॉल्विंग स्किल और सीखने की क्षमता प्रभावित हो सकती है।

इंडियन एकेडमी ऑफ पीडियाट्रिक्स का कहना है कि एक साल से कम उम्र के बच्चों को बिल्कुल भी स्क्रीन के संपर्क में नहीं लाना चाहिए। मगर सच तो यह है कि इन निर्देशों का बमुश्किल पालन किया जाता है और खुद माता– पता अक्सर छोटे बच्चों को बिजी रखने के लिए एनीमेशन वीडियो या गाने बजाते हैं। चिकित्सक कहते हैं कि इसका बच्चे के विकास पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। इसे हतोत्साहित किया जाना चाहिए।

बाल मनोविज्ञानी कहते हैं कि छोटे बच्चों को जो भी बताया जाता है या दिखाया जाता है, वे उसे जल्दी अपना लेते हैं। एक्टिव कम्युनिकेशन में शामिल नहीं किए जाने से उनमें बातचीत करने या अपनी इच्छाओं को जाहिर करने का कौशल नहीं विकसित

हो पाता है। लंबे समय तक स्क्रीन पर रहने से फिजिकल एक्टिविटीज़ भी कम हो जाती हैं। साथ ही ज्यादा स्क्रीन टाइम का असर नींद के पैटर्न को खराब करता है और कान्सन्ट्रेशन संबंधी समस्या पैदा करता है जीसासए बच्चा सीखने में पूरा ध्यान नहीं लगा पाता।

पेरेंट्स को अपने बच्चों को शुरुआती दिनों से ही बताना चाहिए कि मोबाइल उनके लिए कितना हानिकारक है। इसके साथ ही पैरेंट्स को भी बच्चों के सामने जितना हो सके मोबाइल का कम से कम इस्तेमाल करना चाहिए और बच्चों को आउटडोर खेल, पढ़ने और रचनात्मक शौक के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

विशेषज्ञों का कहना है कि मां-बाप को बच्चे के साथ ज्यादा से ज्यादा समय बिताना चाहिए। उनको कहानियां सुनानी चाहिए, उनके साथ खेलना चाहिए और उस दौरान मोबाइल को जितना दूर हो सके उतना दूर रखना चाहिए ताकि मां-बाप के साथ बच्चों का ध्यान उसपर न जाए।

विशेषज्ञ कहते हैं कि कोई भी गैजेट और स्क्रीन पर बिताया गया समय भाई-बहनों और परिवार के सच्चे प्यार की जगह नहीं ले सकता। सबसे महत्वपूर्ण चीज रिश्ते होते हैं और उनके लिए बच्चों को समय देना बहुत अहम है।

समय तेजी से बदल रहा है। हमारे बच्चों के पास छह साल का होने से पहले क्वालिटी टाइम से अधिक स्क्रीन टाइम होता है। इस शुरुआती उम्र के दौरान समय का निवेश करना बच्चे के विकास के लिए अमूल्य और महत्वपूर्ण होता है।

हाल ही में एक सर्वेरिपोर्ट में कहा गया कि बच्चों के स्क्रीन टाइम को लेकर 89 फीसदी भारतीय मांएं चिंता करती हैं। मार्केट रिसर्च कंपनी टेकऑर्क के इस सर्वेमें 600 कामकाजी मांओं ने भाग लिया था। रिपोर्ट में कहा गया, मांओं का मानना है कि स्क्रीन टाइम बढ़ने से बच्चों की पढ़ाई प्रभावित होती है, उनके मानसिक और सामाजिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक असर पड़ता है। ❑

विशेषज्ञों का कहना है कि मां-बाप को बच्चे के साथ ज्यादा से ज्यादा समय बिताना चाहिए। उनको कहानियां सुनानी चाहिए, उनके साथ खेलना चाहिए और उस दौरान मोबाइल को जितना दूर हो सके उतना दूर रखना चाहिए ताकि मां-बाप के साथ बच्चों का ध्यान उस पर न जाए।

खबरें जहान भर की एआई वाले पर्सनल कंप्यूटर



अमेरिकी टेक कंपनी माइक्रोसॉफ्ट ने एआई फीचर्स वाले पर्सनल कंप्यूटरों की नई श्रेणी बाज़ार में उतारी है। कोपायलट प्लस कंप्यूटर आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस से लैस हैं। कंप्यूटर पर सीधे चलने वाले एआई असिस्टेंस को बहुत बड़ा बदलाव माना जा रहा है।

पर्सनल कंप्यूटरों में अभी बहुत सारा काम खुद करना पड़ता है। जैसे फोटो एडिट करना, एक्सेल शीट मैनेज करना, प्रजेंटेशन बनाना और गणनाएं करना। एआई फीचर्स वाले कंप्यूटरों के जरिए ऐसे बहुत सारे काम वॉयस कमांड देकर किए जा सकेंगे।

फिलहाल कंप्यूटरों में एआई का इस्तेमाल करने के लिए, नेट के जरिए क्लाउड बेस्ड एआई प्लेटफॉर्म्स तक जाना पड़ता है। माइक्रोसॉफ्ट का कहना है कि कोपायलट प्लस, क्लाउड डाटा सिस्टम के बिना भी एआई से जुड़ी टास्क पूरी करेगा।

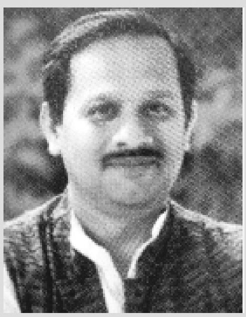
इसमें रिकॉल नामका एक फीचर भी है जिसके जरिए यूजर अपने कंप्यूटर पर की गई हर गतिविधि को महीनों बाद भी ट्रेस कर सकेंगे। फिलहाल कंप्यूटर की ब्राउजिंग हिस्ट्री या रिसाइकिल बिन क्लीन करने के बाद ऐसा करना संभव नहीं होता है। लेकिन कोपायलट की मदद से किसी भी तरह का डॉक्यूमेंट, वेबपेज या फाइल रिकॉल की जा सकेगी।

ऐसे असिस्टेंट का इस्तेमाल पढ़ाई करने और अपने कैलेंडर को अपडेट रखने में भी किया जा सकता है। माइक्रोसॉफ्ट के मुताबिक चैटजीपीटी का ताजा वर्जन जीपीटी-4 भी जल्द ही कोपायलट का हिस्सा होगा। उम्मीद है कि अगले साल तक पांच करोड़ एआई पीसी बिकेंगे। अनुमानों के मुताबिक आने वाले बरसों में इसका बाजार खरबों डॉलर तक पहुंच सकता है। तकनीकी बढ़त के जरिए कई टेक कंपनियां और स्टार्ट अप इस बाजार पर छाना चाहते हैं। गूगल की पैरेंट कंपनी अल्फाबैट और एप्पल भी इस रेस में हैं।❑

लेख

भाषाई अस्मिता की पहचान पर विमर्श

❑



❑

मिथिलेश

प्राकृत भारती अकादमी की नंदकिशोर आचार्य के संपादकत्व में अहिंसा–शांति ग्रंथमाला के तहत प्रकाशित पुस्तक 'अस्मिता–विमर्श अहिंसात्मक परिपेक्ष्य' में से भाषा से संबंधित यह अंश यहां दिया जा रहा है जो गंभीर विमर्श प्रस्तुत करता है। लेखक महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा में शिक्षण का काम करते हैं।❑ सं.

भाषा अपने स्व को पहचानने एवं उसे अभिव्यक्त करने का एक माध्यम है। भाषा के बिना अस्मिता की पहचान नहीं होती। भाषा ही वह तत्त्व है जिसके द्वारा हम मूल्यों का सृजन करते हैं। भाषाई अस्मिता का अर्थ है – एक भाषा बोलने वालों की अपनी पहचान।

भाषा की अपनी निजी विशेषताएं होती हैं। प्रत्येक व्यक्ति की भाषा दूसरे से अलग होती है। एक ही भाषा का प्रयोग करने वाले लोगों में उच्चारण, शब्द चयन एवं शैली स्तर पर भेद पाए जाते हैं। इसी प्रकार किसी वर्ग, समाज एवं राष्ट्र विशेष के लोगों की भाषा भी दूसरे से भिन्न होती है। किसी वर्ग, समाज एवं राष्ट्र आदि की अस्मिता उसकी भाषा में भी प्रतिबिंबित होती है। अस्मिता को प्रकट करने वाली भाषा को हम मनोवैज्ञानिक, भौगोलिक, सामाजिक, राष्ट्रीय तथा जातीय आदि कई आधार पर देख सकते हैं।

मनोवैज्ञानिक अस्मिता का संबंध भाषा से होता है। व्यक्ति के विचारों को जानने का प्रमुख साधन भाषा ही होता है। किसी बालक, युवक, तथा प्रौढ़ की भाषा में अंतर होता है। भाषा के द्वारा उसकी सोच एवं अनुभव आदि का परिचय हमें सहज रूप में परिचय मिल जाता है। भाषा के द्वारा हम यह भी जान सकते हैं कि कोई व्यक्ति अंतर्मुखी है अथवा बहिर्मुखी है। भौगोलिक अस्मिता का परिचय भी भाषा के माध्यम से ही मिलता है। विभिन्न भौगोलिक भाषा में अंतर देखा जा सकता है। इन क्षेत्रों में प्रयुक्त शब्दावली भी अलग–अलग होती है।

उत्तरप्रदेश के गाजीपुर तथा बिहार के कैमुर में रहने वाले दो लोगों की भोजपुरी के बीच फर्क होता है। यह फर्क उनकी बातचीत में देखा जा सकता है। सामाजिक अस्मिता का भी भाषा से गहरा संबंध होता है। दो अलग–अलग समाज के मध्य हम भाषा के आधार पर भी अंतर देख सकते हैं। यहां तक कि एक भाषा समाज में भी विभिन्न वर्गों की अस्मिता भाषा के द्वारा व्यक्त हो जाती है। विभिन्न वर्ग अपनी विशिष्ट भाषिक क्षमता, शब्दावली एवं भाषा शैली के माध्यम से स्वयं की अस्मिता को उजागर कर देते हैं। उदाहरणस्वरूप, समाज में निम्न एवं उच्च वर्ग की भाषा, शिक्षित और अशिक्षित वर्ग की भाषा, शहरी और ग्रामीण वर्ग की भाषा, अधिकारी एवं अधीनस्थ वर्ग की भाषा आदि को उम देख सकते हैं। यहां तक

कि स्त्री और पुरुष वर्ग की भाषा का भी इस दृष्टि से अध्ययन किया जा सकता है।

भारत के संदर्भ में सामाजिक अस्मिता का भाषा से गहरे संबंध का पता इसी बात से लगाया जा सकता है कि यहां राज्यों का पुनर्गठन भाषा को आधार बना कर किया गया है। भाषा को अस्मिता का सवाल् बना कर ही 1960 ई. में महाराष्ट्र को महाराष्ट्र और गुजरात में विभक्त किया गया था।

पंजाब से हरियाणा को अलग करने के पीछे भी भाषा एक प्रमुख कारण थी। आज पश्चिम बंगाल से गोरखालैंड को अलग करने के लिए जो आंदोलन चलाए जा रहे हैं, उसमें भाषा को एक प्रमुख हथियार के रूप में इस्तेमाल किया जा रहा है। अतः देश में राज्यों के पुनर्गठन के पीछे भौगोलिक, राजनीतिक तथा आर्थिक कारणों से पड़े भाषा को आधार बना कर निर्णय लेना वस्तुतः भाषा से जुड़ी अस्मिता के महत्व को ही दर्शाता है। इससे यह तथ्य भी सामने आता है कि किसी समाज विशेष के सदस्यों को जोड़कर रखने में भी भाषा की प्रमुख भूमिका होती है। ठीक इसी प्रकार एक समुदाय का दूसरे समुदाय से अलगाव का प्रमुख कारण भी भाषा ही होती है।

भाषाई अस्मिता के आधार पर हम राजभाषा एवं राष्ट्रभाषा में भी अंतर देख सकते हैं। राजभाषा वस्तुतः प्रशासनिक प्रयोजन एवं आर्थिक विकास के लिए एक प्रकार से जनता पर थोपी गई भाषा होती है, वहीं राष्ट्रभाषा का संबंध सामाजिक अस्मिता की भक्षस से होता है। यह किसी देश की अपनी भाषा होती है। लोगों का अपनी

भाषा की अपनी निजी विशेषताएं होती हैं। प्रत्येक व्यक्ति की भाषा दूसरे से अलग होती है। एक ही भाषा का प्रयोग करने वाले लोगों में उच्चारण, शब्द चयन एवं शैली स्तर पर भेद पाए जाते हैं। इसी प्रकार किसी वर्ग, समाज एवं राष्ट्र विशेष के लोगों की भाषा भी दूसरे से भिन्न होती है। किसी वर्ग, समाज एवं राष्ट्र आदि की अस्मिता उसकी भाषा में भी प्रतिबिंबित होती है। अस्मिता को प्रकट करने वाली भाषा को हम मनोवैज्ञानिक, भौगोलिक, सामाजिक, राष्ट्रीय तथा जातीय आदि कई आधार पर देख सकते हैं।

राष्ट्रभाषा के प्रति भावात्मक रूप से जुड़ाव होता है। यह देश की एकता को एक मजबूत आधार प्रदान करता है। किसी भी देश के लोगों की अस्मिता उस देश की राष्ट्रभाषा से तय होती है, न कि राजभाषा से । भारत में हिन्दी एवं अंग्रेजी भाषा को इस संदर्भ में देखा जा सकता है।

भारत में भाषाओं के आधार पर बनी अस्मिताएं विबिनन सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक प्रयोजनों के कारण सोपाणिक ढंग से स्तरीकृत है। अतः, एक राज्य का व्यक्ति केवल एक भाषा का ही प्रयोग नहीं करता। स्थानीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय संदर्भ में वह बोली, भाषा तथा अंतरराष्ट्रीय भाषा का प्रयोग करता है। एक गुजराती व्यक्ति स्थानीय स्तर पर गुजराती का, राष्ट्रीय स्तर पर संपर्क के लिए हिन्दी का तथा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अंग्रेजी का प्रयोग करता है। अतः संभव है कि यहां दो स्तरों पर टकराव की स्थिति पैदा हो जाए। दक्षिण भारत के लोगों द्वारा राजभाषा के रूप में हिन्दी को न स्वीकार करने के पीछे का कारण दो स्तरों के बीच भाषा का तनाव ही है। अतः किसी व्यक्ति, वर्ग, समाज और राष्ट्र की अस्मिता उसकी भाषा से ही व्यक्त होती है। भाषाई अस्मिता किसी देश की एकता में अपनी प्रमुख भूमिका निभाती है। राष्ट्र की सर्वाधिक सशक्त पहचान उसकी भाषा होती है। भाषा से जुड़ी सांस्कृतिक परंपरा किसी भी राष्ट्र की ताकत होती है, जो राष्ट्र निर्माण के कार्य में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

भाषा और सत्ता एक-दूसरे से घनिष्ट रूप से संबंधित हैं। जिस भाषा को बॉइलने वाले, समझने वाले अधिक लोग होते हैं, राजनीतिक सत्ता में उसे अधिक महत्व दिया जाता है और उनके हाथों में अधिक शक्ति आ जाती है, क्योंकि सत्ता और शक्ति आपस में संबंधित होते हैं। बहुसंख्यक भाषा-भाषी अपनी भाषा को महत्व प्रदान करने के लिए संघर्ष करते हैं तथा सत्ता पक्ष में भाषाई शक्ति के आधार पर अपनी पहचान बना लेते हैं। अधिकांशतः जिनके पास जनशक्ति होती है, रणनीतिक गलियारों में उन्हें विशेष महत्व दिया जाता है। सत्ता सदैव संस्थागत होती है, वह वैधानिक रूप से महत्वपूर्ण समझी जाती है, भाषा के आधार पर एक भाषाभाषी शक्ति के रूप में सत्ता को प्रभावित कर लेते हैं। सत्ता प्रभाव और शक्ति का ही एक रूप होती है। अतः भाषा और शक्ति परस्पर एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। ❑

एक छत और चारदीवारी के बीच ढहती मज़हब की दीवार

धर्म के नाम पर घनघोर ध्रुवीकरण के समय में यह रिपोर्ट भारतीय समाज के आपसी प्रेम और सौहार्द की विरासत के बने रहने का आश्वासन देती है। बीबीसी संवाददाता की यह रपट यह भरोसा भी दिलाती है कि युवा पीढ़ी धर्म के नाम पर अलगाव की राजनीति के प्रपंच में पड़ने से बचते हुए सामाजिक समरसता की राह को उजड़ने से बचा भी रही है। सं.

❑

काव्या की किसी मुसलमान लड़की से यह पहली दोस्ती है। दोस्ती बनारस के काशी हिन्दू विश्वविद्यालय (बीएचयू) में रूममेट बनने के बाद हुई।

काव्या कहती हैं कि नूर फ़ातिमा ख़ान से दोस्ती इसलिए जल्दी हो गई क्योंकि दोनों का फ़ूड एक है. यानी दोनों नॉनवेज खाती हैं। काव्या कहती हैं, जब खाने और गाने एक हों तो रिश्ता निभाना आसान हो जाता है।

नूर फ़ातिमा ख़ान को जब पता चला कि काव्या तमिलनाडु की हैं तो उन्हें लगा कि दोनों के बीच बात कैसे होगी? नूर सोचने लगीं कि अंग्रेज़ी बोलनी होगी लेकिन काव्या ने नूर से हिन्दी में बात शुरू की तो उन्होंने राहत की सांस ली। नूर कहती हैं, हम लोगों का खाना एक है लेकिन साथ रहते हुए पता चला कि गाने भी हम दोनों एक जैसे ही सुनते हैं।

उत्तर प्रदेश की नूर और तमिलनाडु की काव्या का बीएचयू कैंपस के होस्टल में रूममेट बनना एक संयोग था। काव्या को जो रूम मिल रहा था, वो पसंद नहीं था और दोनों रूममेट बन गईं। दोनों बीएचयू से फ़ाइन आर्ट्स में मास्टर कर रही हैं।

नूर बताती हैं कि साथ में रहते हुए मुश्किल से एक या दो दिन हुए थे। काव्या अपनी माँ से फ़ोन पर तमिल में बात कर रही थीं। इस बातचीत में वह बार-बार 'नूर' बोल रही थीं। काव्या की बातचीत में अपना नाम सुनकर नूर के कान खड़े हो गए। नूर को लगा कि अभी तो दो दिन ही हुए हैं और काव्या अपनी माँ से उनकी शिकायत करने



काव्या और नूर

लगी हैं। नूर से नहीं रहा गया और उन्होंने काव्या से पूछ लिया, ''तुम अपनी माँ से बातचीत में मेरा नाम बार-बार क्यों ले रही थी? इस पर काव्या ज़ोर से हँसने लगीं और कुछ देर तक हँसती रहीं। नूर और बुरी तरह से चिढ़ गई थीं। फिर काव्या ने बताया कि तमिल में 'नूर' का मतलब सौ होता है। काव्या ने बताया कि वह अपनी माँ से कैश के बारे में बात कर रही थीं कि आज पाँच सौ खर्च हुए, परसों तीन सौ खर्च हुए थे। जहाँ-जहाँ भी सौ आ रहा था, वहाँ-वहाँ काव्या 'नूर' बोल रही थीं। अब हँसने की बारी नूर की थी। वह कुछ देर तक हँसती रहीं और फिर दोनों एक साथ हँसने लगीं। दोनों की दोस्ती की शुरुआत इसी हँसी से होती है लेकिन दोनों के संबंधों में रोना भी है, नाराज़गी भी है और गुस्सा भी, पर इससे पहले आपको मोहम्मद शाहिद और मनीष के कमरे में ले चलते हैं।

शाहिद और मनीष के कमरे में क़दम रखते ही नज़र कई पेंटिंग्स पर जाती है। दोनों के कमरे का बुक शेल्फ़ एकाएक ध्यान खींचता है। बुक शेल्फ़ के एक कोने में क़ुरान रखा हुआ है और नमाज़ पढ़ने के लिए टोपी। उसके ठीक ऊपर देवी सरस्वती की मूर्ति और एक तस्वीर रखी है। शाहिद बताते हैं कि वह इसी कमरे में नमाज़ पढ़ते हैं और उनके रूममेट पूजा करते हैं। शाहिद क़ुरान और देवी सरस्वती की मूर्ति दिखाते हुए कहते हैं- सर, भारत तो ऐसा ही होना चाहिए न?

मैंने काव्या और नूर से पूछा कि जब भी उत्तर प्रदेश में सांप्रदायिक नफ़रत की वारदातें होती हैं तो उनके संबंधों पर कैसा असर पड़ता है?

काव्या बताती हैं, हम दोनों इस पर बात तो करते हैं. मुझसे नूर ने एक बार कहा कि उसे मुस्लिम होने के कारण बनारस में किराए पर कमरा नहीं मिलता है. नूर की इस बात पर मैं कुछ देर तक चुप रही और सोचने लगी कि उसे कैसे जवाब दूँ कि उसके भीतर हीन भावना न भरे.''

''मैंने उसे समझाया कि मुझे भी दिल्ली में कमरा नहीं मिलता था क्योंकि मैं नॉन वेज खाती हूँ. दक्षिण भारत के 90 फ़ीसदी से ज़्यादा हिन्दू नॉन वेज खाते हैं. मैंने नूर को समझाया कि यहाँ केवल धर्म के आधार पर ही भेदभाव नहीं है बल्कि खान-पान के आधार पर भी है. इस भेदभाव की चपेट में हिन्दू भी आते हैं.

नूर की नाउम्मीदी और निराशा में काव्या एक मज़बूत उम्मीद की तरह खड़ी रहीं जबकि शाहिद को अपने रूममेट से ही जूझना पड़ा.

शाहिद बताते हैं, मुझे अपने गाँव, शहर और आसपास के लोगों से मुसलमान होने के कारण जो झेलना पड़ा, उसकी कोई गिनती नहीं है लेकिन मनीष की सोच भी वैसी ही थी. अभी के मनीष और एक साल पहले के मनीष में बहुत फ़र्क़ है.

शाहिद की बातों से मनीष भी सहमति जताते हुए कहते हैं, अगर शाहिद ना मिला होता तो मैं एक अच्छा इंसान नहीं बन पाता. मेरे मन में मुसलमानों को लेकर कई तरह की धारणाएँ थीं. इसे नफ़रत भी कह सकते हैं.

वे कहते हैं, मुझे लगता था कि यहाँ मुसलमान क्यों हैं? उनके लिए तो पाकिस्तान बन ही गया है. पाकिस्तान जब बना था, तभी भारत से मुसलमानों को मारकर भगा देना चाहिए था. जब भी भारत में आतंकवादी हमला होता था तो मुसलमानों को लेकर मन में नफ़रत भर जाती थी.

मनीष के मन में इतनी नफ़रत कहाँ से आई? इस सवाल का जवाब मनीष और शाहिद दोनों देते हैं.

शाहिद कहते हैं, मनीष पढ़ने से ज़्यादा मोबाइल पर एंटी मुस्लिम कॉन्टेंट देखता था. उसका मुसलमानों से कभी मेलजोल रहा नहीं. मैंने कई बार उसे देखा कि बग़ल में ही बैठकर मुसलमानों को भला-बुरा कहने वाले वीडियो देखता था. फिर मैंने सोचा कि इससे बात करनी चाहिए.

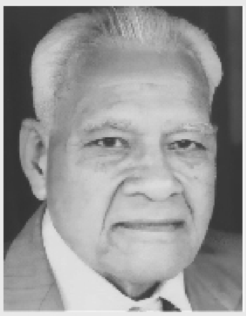
शाहिद कहते हैं, मैंने मनीष को अपने घर लेकर आया. वहाँ रहा और मेरे परिवार वालों से मिला. धीरे-धीरे उसे अहसास हुआ कि मुसलमानों को लेकर उसके मन में जो नफ़रत है, वह झूठ पर आधारित है। ❑


शाहिद और मनीष

लेख

विश्वविद्यालयों में शोध का गिरता स्तर

❑



❑

डॉ. नरेन्द्र शर्मा 'कुसुम'

विश्वविद्यालयों में शोध के गिरते स्तर की चेतावनी देता यह आलेख उच्च शिक्षा के प्रबंधकों का ध्यान खींचता है।❑ सं.

वैसे तो शिक्षा के सभी स्तरों पर गुणवत्ता का होना परमावश्यक है पर उच्च शिक्षा के संस्थानों – महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों – का प्रमुख दायित्व है कि वहां किये जा रहे शोधों का स्तर न केवल उच्च हो अपितु वैश्विक स्तर के अनुरूप हो। उम्मीद की जाती है कि इन केंद्रों पर पीएचडी या उससे आगे की उपाधि हेतु किए जाने वाले शोध कार्य का स्तर श्रेष्ठ से श्रेष्ठतर होगा और इसके द्वारा न केवल ज्ञान के क्षितिजों का विस्तार होगा अपितु मौलिक चिंतन की दीक्षाएं भी मुखर होंगी। पर देखा यह गया है कि अधिकांश रूप में पीएचडी हेतु प्रस्तुत किए जाने वाले शोध प्रबंधों में न केवल मौलिकता का अभाव होता है अपितु उनमें इधर–उधर से इकट्ठी की गई सामग्री का संकलन मात्र होता है। शोध के गिरते हुए स्तर के कई कारण हैं। पीएचडी को रोज़गार की अनिवार्य शर्त मान कर हर कोई पीएचडी करना चाहता है। चाहे उसमें शोधोन्मुख प्रवत्ति हो या न हो। वह ऐन केन प्रकार से उस डिग्री को हासिल करना चाहता है, यहीं से इस क्षेत्र में भ्रष्टाचारण शुरू होता है। इसमें न केवल शोधार्थी अपितु शोध निदेशक, परीक्षक तथा विश्वविद्यालय का समस्त शोधतन्त्र शामिल होता है। सभी कार्य एक अजीब सी हड़बड़ी और आपाधापी में होते हैं। इसमें गुणवत्ता या श्रेष्ठता को प्रायः प्राथमिकता नहीं दी जाती।

यह बीमारी प्रायः हर विश्वविद्यालय में पाई जाती है। यह सभी की जानकारी में है कि पीएचडी की खरीद फरोख्त, शोध सामग्री का चौर्य–कर्म, पैसे लेकर दूसरों के लिए लिखने वाले लोगों का माफिया आदि जैसी बातें आम हैं। यही कारण है कि पीएचडी करने वालों की संख्या बढ़ती जा रही है जबकि शोध का स्तर शोध की अपेक्षित शर्तों को शायद ही पूरा करता हो। यही कारण है कि न तो हमें अपने–अपने क्षेत्र में विशेषज्ञ, मौलिक चिंतक, राजनीतिशास्त्र विशारद, विख्यात वैज्ञानिक और न सृजनशील साहित्यकार या विषय मर्मज्ञ मिल पा रहे हैं। शोध की इस बदहाली पर हमें चिंतित होना चाहिए और अविलंब ऐसे कदम उठाने चाहिए जिससे कि न केवल शोध का स्तर सुधरे अपितु पीएचडी डिग्री पाने वाले अपनी योग्यता और पात्रता को पूरी तरह से साबित कर सकें। इसके लिए विश्वविद्यालय तंत्र को कड़े कदम उठाने होंगे। यह बहुत कठिन काम है। मगर शोध के स्तर को सुधारना और अमौलिक शोध कार्य को निरुत्साहित करना हमारी प्राथमिकता होनी चाहिए। ❑

दो मज़ाहिया नज़्में जिन्हें अपने–अपने फन के अज़ीम शायरों ने लिखी उर्दू के शायरों ने जीवन के अने
यहां दो शायरों की नज़्मों से



राजा मेहदी अली ख़ाँ

अदीब की महबूबा

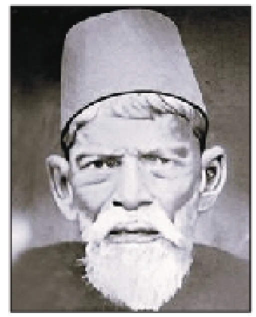
देश के बंटवारे में बहुत से मुसलमान भारत से पाकिस्तान और अधिकांश हिन्दू पाकिस्तान से भारत आए। एक ऐसा भी इनसान था, जो था तो मुसलमान और पैदा भी उस इलाक़े में हुआ था, जो तब पाकिस्तान का हिस्सा बन रहा था, मगर उसने बंटवारे के समय अपनी पत्नी ताहिरा के साथ पाकिस्तान से भारत में आना बेहतर समझा। इस इनसान का नाम था राजा मेंहदी अली ख़ान, जिसने हिन्दी सिनेमा के लिये अनेक अद्भुत गीत लिखे। इस शेयर की एक मज़ाहिया नज़्म जिसमें मशहूर शायरों और अदीबों के नामों का बेहतरीन इस्तेमाल किया गया है। ❑ सं.

अदीब की महबूबा

तुम्हारी उल्फ़त में हारमोनियम पे 'मीर' की ग़ज़लें गा रहा हूँ
बहत्तर इन में छुपे हैं नश्तर जो सब के सब आज़मा रहा हूँ
बहुत दिनों से तुम्हारे जल्वे 'ख़दीजा-मस्तूर' हो गए हैं
हैं शुक्र-ए-बारी कि सामने अपने आज फिर तुम को पा रहा हूँ
लिहाफ़ 'इस्मत' का ओढ़ कर तुम फ़साने 'मंटो' के पढ़ रही हो
पहन के 'बेदी' का गर्म कोट आज तुम से आँखें मिला रहा हूँ
तुम्हारे घर 'नून-मीम-राशिद' का ले के आया सिफ़ारशी ख़त
मगर तअज्जुब है फिर भी तुम से नहीं मैं कुछ 'फ़ैज़' पा रहा हूँ
बहुत है सीधी सी बात मेरी न जाने तुम क्यूँ नहीं समझतीं
क़सम ख़ुदा की कलाम-ए-'ग़ालिब' नहीं मैं तुम को सुना रहा हूँ
तुम्हारी ज़ुल्फ़-ए-सियह पे तन्क़ीद किस से लिखवाऊँ तुम ही बोलो
'श्री-इबादत-बरेलवी' को मैं तार दे कर बुला रहा हूँ
मैं तुम पे हूँ 'जाँ-निसार-अख़्तर' क़सम है 'मुंशी-फ़िदा-अली' की
बहुत दिनों से मैं तुम पे 'साहिर' से जादू टोने करा रहा हूँ
अगर हो तुम 'हाजरा' तो फिर मुझ से मिल के 'मसरूर' क्यूँ नहीं हो
तुम्हारे आगे 'ओपेंदर-नाथ-अश्क' बन के आँसू बहा रहा हूँ
हसीं हो ज़ोहरा-जमाल हो तुम मुझे सता कर निहाल हो तुम
तुम्हारे ये ज़ुल्म 'क़ुर्रत-उल-ऐन' को बताने मैं जा रहा हूँ
मिरी मोहब्बत की दास्ताँ सुन के रो पड़े 'जोश-मलसियानी'
सुखा के पंखे से उन के आँसू अभी वहाँ से मैं आ रहा हूँ
मिरी तबाही पे छाप देंगे नुक़ूश का एक ख़ास नंबर
'तुफ़ैल-साहब' के पास सारे मुसव्वदे ले के जा रहा हूँ
'वज़ीर-आग़ा' पठान हैं साथ साथ यारों के यार भी हैं
पकड़ के वो तुम को पीट देंगे मैं कल उन्हें साथ ला रहा हूँ
'हकीम-यूसुफ़-अली' ने जब मेरी नब्ज़ देखी तो रो के बोले
'जिगर' है ज़ख़्मी तबाह गुर्दे ये बात तुम से छुपा रहा हूँ
मलीहाबाद आज जा रहा हूँ मैं 'जोश' लाऊँ कि आम लाऊँ
हैं दोनों चीज़ें वहाँ की अच्छी मैं लाऊँ क्या तिलमिला रहा हूँ
जो हुक्म दो 'वाजिदा-तबस्सुम' का कुछ तबस्सुम
मैं तुम को ला दूँ
तुम्हारे होंटों पे ग़म की मौजों को देख कर तिलमिला रहा हूँ
फ़साना-ए-इश्क़ मुख़्तसर है क़सम ख़ुदा की न बोर होना
'फ़िराक़-गोरखपुरी' की ग़ज़लें नहीं मैं तुम को सुना रहा हूँ
मिरी मोहब्बत की दास्ताँ को गधे की मत सरगुज़िश्त समझो
मैं 'कृष्ण-चंद्र' नहीं हूँ ज़ालिम यक़ीन तुम को दिला रहा हूँ
पिलाओ आँखों से ताकि मुझ को कुछ
'आल-ए-अहमद-सुरूर' आए
बहुत है ग़म मुझ को आशिक़ी के बिना पिए डगमगा रहा हूँ ❑

क रंगों को अपनी शायरी में संजोया है। इन रंगों में एक रंग मज़ाहिया शायरी भी है। जिसकी एक बानगी प्रस्तुत की जा रही हैं। ❑ सं.

अकबर इलाहाबादी उर्दू के जाने माने व्यंगकार शायर थे। ब्रितानवी शासन में वे सैशन कोर्ट के जज भी रहे।



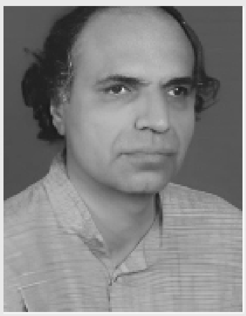
अकबर इलाहाबादी

जल्वा-ए-दरबार-ए-देहली

सर में शौक़ का सौदा देखा
देहली को हम ने भी जा देखा जो कुछ देखा अच्छा देखा
क्या बतलाएँ क्या क्या देखा
जमुना-जी के पाट को देखा अच्छे सुथरे घाट को देखा
सब से ऊँचे लाट को देखा, हज़रत 'डिऊक-कनॉट' को देखा
पलटन और रिसाले देखे गोरे देखे काले देखे
संगीनें और भाले देखे बैंड बजाने वाले देखे
ख़ेमों का इक जंगल देखा उस जंगल में मंगल देखा
ब्रह्मा और वरंगल देखा इज़्ज़त ख़्वाहों का दंगल देखा
सड़कें थीं हर कम्प से जारी पानी था हर पम्प से जारी
नूर की मौजें लैम्प से जारी तेज़ी थी हर जम्प से जारी
डाली में नारंगी देखी महफ़िल में सारंगी देखी
बैरंगी बारंगी देखी दहर की रंगा-रंगी देखी
अच्छे-अच्छों को भटका देखा भीड़ में खाते झटका देखा
मुँह को अगरचे लटका देखा दिल दरबार से अटका देखा
हाथी देखे भारी-भरकम उन का चलना कम कम थम थम
ज़र्रीं झूलें नूर का आलम मीलों तक वो चम-चम चम-चम
पुर था पहलू-ए-मस्जिद-ए-जामे रौशनियाँ थीं हर-सू लामे
कोई नहीं था किसी का सामेअ' सब के सब थे दीद के तामे
सुर्ख़ी सड़क पर कुटती देखी साँस भी भीड़ में घुटती देखी
आतिश-बाज़ी छुटती देखी लुत्फ़ की दौलत लुटती देखी
चौकी इक चौ-लख्खी देखी ख़ूब ही चख्खी-पख्खी देखी
हर-सू ने'मत रख्खी देखी शहद और दूध की मक्खी देखी
एक का हिस्सा मन्न-ओ-सल्वा एक का हिस्सा थोड़ा हल्वा
एक का हिस्सा भीड़ और बलवा मेरा हिस्सा दूर का जल्वा
अवज बरीश राजा देखा परतव तख़्त-ओ-ताज का देखा रंग-ए-ज़माना आज का देखा रुख़ कर्ज़न महराज का देखा
पहुँचे फाँद के सात समुंदर तहत में उन के बीसों बंदर
हिकमत-ओ-दानिश उन के अंदर अपनी जगह हर एक सिकंदर
औज-ए-बख़्त-ए-मुलाक़ी उन का चर्ख़-ए-हफ़्त-तबाक़ी उन का
महफ़िल उन की साक़ी उन का आँखें मेरी बाक़ी उन का
हम तो उन के ख़ैर-तलब हैं हम क्या ऐसे ही सब के सब हैं
उन के राज के उम्दा ढब हैं सब सामान-ए-ऐश-ओ-तरब हैं
एग्ज़ीबीशन की शान अनोखी हर शय उम्दा हर शय चोखी
अक़्लीदस की नापी जोखी मन भर सोने की लागत सोखी
जशन-ए-अज़ीम इस साल हुआ है शाही फ़ोर्ट में बाल हुआ है
रौशन हर इक हॉल हुआ है क़िस्सा-ए-माज़ी हाल हुआ है
है मशहूर-ए-कूचा-ओ-बर्ज़न बॉल में नाचें लेडी-कर्ज़न
ताइर-ए-होश थे सब के लरज़ान रश्क से देख रही थी हर ज़न
हॉल में चमकीं आ के यका-यक ज़र्रीं थी पोशाक झका-झक
महव था उन का औज-ए-समा तक चर्ख़ पे ज़ोहरा उन की थी गाहक
गो रक़्क़ासा-ए-औज-ए-फ़लक थी उस में कहाँ ये नोक-पलक थी
इन्द्र की महफ़िल की झलक थी बज़्म-ए-इशरत सुब्ह तलक थी
की है ये बंदिश ज़ेहन-ए-रसा ने कोई माने ख़्वाह न माने
सुनते हैं हम तो ये अफ़साने जिस ने देखा हो वो जाने ❑

लेख

निष्ठावान अहिंसक जन–आंदोलनों की जरूरत



भारत डोगरा

लेखक आर्थिक समता तथा सामाजिक न्याय के लिए अहिंसक तथा पारदर्शी जन आंदोलन की पैरवी करते हुए व्यापक जन संवाद की आवश्यकता बताते हैं। सं.

आज के विश्व में बहुत व्यापक, गहरी निष्ठा के व अहिंसक जन–आंदोलनों की इतनी जरूरत है जितनी की मानव इतिहास में पहले कभी नहीं थी। यह इस कारण है कि हम इतिहास के सबसे नाजुक दौर से गुजर रहे हैं, जब मानव निर्मित कारणों से मनुष्य व अन्य जीवन रूपों के लिये अस्तित्व मात्र का खतरा उत्पन्न हो रहा है व धरती की जीवांदायिनी क्षमता ही स्थाई रूप से क्षतिग्रस्त होने के खतरे में हैं। इस स्थिति में यह बहुत जरूरी है कि, न्याय, संता पर्यावरण की रक्षा, सभी जीवों की रक्षा, अमन शांति जैसे शाश्वत जीवन मूल्यों में जिन लोगों की गहरी निष्ठा है, वे आपसी भेदभाव को दूर कर धरती और इस पर रहने वाले जीवों की रक्षा के लिये व्यापक एकता स्थापित करें व संगठित हो कर एक दूसरे का सहारा बन जाएं।

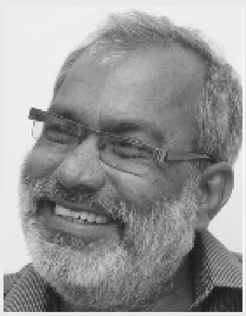
जो आंदोलन या संगठन आर्थिक समता व सामाजिक न्याय के लिये प्रयासरत है वे पर्यावरण रक्षा के आंदोलन से अलग नहीं हैं। दोनों आंदोलनों का मूल उद्देश्य दुखदर्द कम करना है। इसी तरह शांति आंदोलन भी नजदीकी तौर पर दोनों आंदोलनों से जुड़ा है। बध्वंसक युद्ध होते रहे तो बाकी सब सार्थक उद्देश्य पीछे छूट जाएंगे। शांति आंदोलन को भी पता है कि विषमता बढ़ती गई व प्राकृतिक संसाधन लुटते रहे तो युद्ध की संभावना बढ़ेगी। अतः इसमें कोई संदेह ही नहीं कि यह सब उद्देश्य आपस में नज़दीकी तौर पर जुड़े हैं। ऐसे में सभी आंदोलनों की व्यापक एकता बनाकर आगे बढ़ना चाहिए।

इस तरह के व्यापक जन–आंदोलन के लिये अहिंसक व पारदर्शी होना बहुत जरूरी है। न्याय प्राप्ति में विशेषकर दीर्घकालीन हितों को ध्यान में रखा जाए तो हिंसक और गुप्त आंदोलनों की अपेक्षा अहिसनक व पारदर्शी आंदोलन कहीं अधिक सार्थक व उपयोगी होंगे। पहली तरह के आंदोलन उत्साह पैदा कर अन्याय आधारित व्यवस्था को हटाने के अल्पकालीन उद्देश्य में सफल हो जाएं तो भी सबकी दीर्घकालीन भलाई को आगे ले जाने वाला नया समाज बनाने में उन्हें कठिनाई होती है। अतः जन–आंदोलनों को अहिंसा, लोकतंत्र व पारदर्शिता की राह पर सहमति बनानी चाहिए।

इस जन–आंदोलन से अधिक लोग जुड़ सकें, इसके लिये जरूरी है कि वर्त्तमान विकास के मॉडल की सीमाओं और विसंगतियों के बारे में व्यापक स्तर पर जन–संवाद किया जाए।

जुझारू राजनेता डॉ. लोहिया का दार्शनिक अवदान

❑



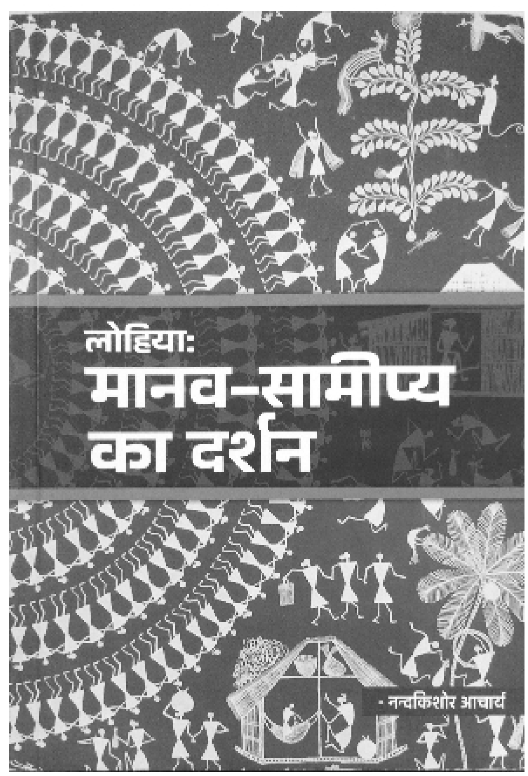
❑

राजाराम भादू

डॉ. लोहिया को एक जुझारूराजनेता के रूप में तो याद किया जाता है पर उनके दार्शनिक व वैचारिक अवदान की आमतौर पर कोई चर्चा नहीं होती है। कवि, चिंतक और अध्येता नंदकिशोर आचार्य ने 'लोहिया: मानव–सामीप्य का दर्शन' पुस्तक लिख कर समाजवाद की उनकी मौलिक व्याख्या को गहन विवेचन के साथ प्रस्तुत करके यह कमी पूरी की है। पुस्तक को आईटीएम यूनिवर्सिटी ग्वालियर ने प्रकाशित किया है। अध्येता राजाराम भादू इस पुस्तक पर टिप्पणी कर रहे हैं।❑ सं.

एक प्रतिबद्ध बुद्धिजीवी अपने अध्ययन– मनन और लेखन के लिए जो चयन करता है, उसे अपने समय से संदर्भित भी करता है और इस तरह समाज में अपनी ओर से प्रासंगिक बौद्धिक हस्तक्षेप करता है। विश्व भर में पुनः उभरते सर्वसत्तावाद और बढती हिंसा के इस दौर में नंदकिशोर आचार्य ने महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय में अहिंसा और शांति अध्ययन संकाय की स्थापना में योग दिया। वह देश में शांति अध्ययनों की शुरुआत का दौर था। तत्पश्चात उन्होंने अहिंसा विश्वकोश तैयार करने का महती उद्यम किया। प्राकृत भारती अकादमी जयपुर के लिए अहिंसा और शांति ग्रंथमाला के अन्तर्गत पचास से अधिक विविध वैचारिक पुस्तकों का लेखन करवाया जिसमें देश भर के अध्येताओं ने योगदान दिया। आचार्य जी ने इस चुनौतीपूर्ण व अनूठी परियोजना का निर्देशन और सभी पुस्तकों का संपादन किया।

अभी नंदकिशोर आचार्य ने आईटीएम यूनिवर्सिटी, ग्वालियर से प्रकाशित प्रस्तुत में लोहिया के राजनीतिक दर्शन को व्यवस्थित रूप से सामने रखा है, जहां वे विजिटिंग



प्रोफेसर के रूप में आजकल कार्यरत हैं। अपने अध्ययन के परिप्रेक्ष्य में आचार्य जी सदैव मानव सभ्यता और उसकी अवधारणा को रखते हैं। लोहिया के पूर्ववर्ती व तत्कालीन सभ्यता- विमर्श की चर्चा करते हुए वे सभ्यता के केन्द्र में रहे मनुष्य की तत्कालीन धारणाओं पर विचार करते हैं। लोहिया भी इन धारणाओं से गुजरते हैं और मनुष्य के चिंतनशील पशु व औजार बनाने वाले के साथ उसके एक और गुण को महत्वपूर्ण मानते हैं, वह है- अपने तथा अपने संबंधों के प्रति चेतना व जागरूकता। मनुष्य को लेकर लोहिया की यही सोच संबंधों की अन्योन्याश्रितता तक पहुंचती है जो मनुष्य- मनुष्य और मनुष्य व प्रकृति के मध्य क्रियाशील है। मनुष्य के इन्हीं संबंधों के बीच स्वतंत्रता को अवस्थित कर वे उसके लिए यथेष्ट अवसरों की आवश्यकता अनुभव करते हैं।

लोहिया के चिंतन में भौतिकवाद के साथ आध्यत्मिकता के लिए भी उतनी ही जगह है और करुणा व चिंतन उनकी आध्यात्मिकता की महत्वपूर्ण अभिव्यक्तियां हैं। वे मानते हैं कि सीमित भावनाएं विराट की एकता से उत्पन्न सुख की शत्रु होती हैं।

आचार्य लोहिया के विराट के एकत्व तथा गांधी की जीवन की एकता में साम्य पाते हैं। लोहिया का रोटी और संस्कृति का सहमेल उनकी भौतिक व अध्यात्मिक की अन्योन्याश्रितता का प्रतिफलन है। लोहिया का कहना था- औद्योगिक सभ्यता के परिणाम स्वरूप मानव के मन और शरीर को जिस तनाव, संवेग, क्लांति और क्षय से ग्रस्त होना पड़ा है, उससे पश्चिम यूरोप के लोगों का वैज्ञानिक सभ्यता की निरुद्देश्यता और निरर्थकता पर विश्वास हो चला है।

इतिहास- दर्शन में लोहिया के लिए सबसे अहम सवाल है- क्या इतिहास के अध्ययन से आदमी को अपनी मंजिल के रास्ते से बुराई के प्रजनन- स्थलों को ढूंढने तथा उन्हें साफ करने में मदद मिल सकती है? आचार्य जी लोहिया के इतिहास- दर्शन को मार्क्सवादी व तत्कालीन समाजवादी सोच से अलगाते हैं जिसकी फलश्रुति में लोहिया कह सके थे- वर्ग अस्थिर जाति है और जाति स्थिर वर्ग। अपनी सामीप्य की अवधारणा को उन्होंने ऐतिहासिक अध्ययन से विकसित किया है। विजित लोग भी विजेता समुदाय के समीप आते हैं , तद्जनित निकटता को वे सामीप्य की अनैच्छिक स्वीकृति मानते हैं। उनके अनुसार वांछनीय तो सामीप्य की स्वैच्छिक स्वीकृति है जो मानवता को गरीबी और मन की पीडा से मुक्ति दे।

वे समानता को भी दो स्तरों पर देखते हैं- बाहरी और आंतरिक, इस आंतरिक स्तर को उन्होंने आध्यात्मिक समानता कहा है जिसमें बाहरी बन्धुता और आंतरिक समत्व दोनों समाहित हैं। सप्त क्रांति की उनकी अवधारणा समानता के ही सात आयामों की व्याख्या करती है। उनके अनुसार समता या समानता जीवन का उतना ही ऊंचा लक्ष्य है जितना कि सत्य या सुंदरता का लक्ष्य। आचार्यजी कहते हैं कि डॉ लोहिया की इस आकांक्षा में क्या भारतीय आदर्श वसुदेव कुटुंबकम की ही अभिव्यक्ति नहीं है!

डॉ लोहिया का विचार है कि समानता को ऐतिहासिक समानता की पृष्ठभूमि में तथा मूर्त- अमूर्त समानताओं के संबंध की पृष्ठभूमि में देखा जाना चाहिए। आधुनिक विश्व में समानता की इच्छा एक जैसा बनने की इच्छा बन गयी है। व्यक्तिगत और सामूहिक क्षेत्र में समानता के प्रयास भ्रष्ट हो जायेंगे, यदि वे एक जैसा दीखने की इच्छा में बदल जायेंगे। आध्यात्मिक समानता से उनका तात्पर्य है- अन्य मनुष्यों के साथ प्रत्यक्ष और नजदीकी अपनापन, जो सम्पूर्ण मानवता के साथ संबंध के निर्गुण विचार की सगुण अभिव्यक्ति है।

डॉ राममनोहर लोहिया पूंजीवाद को समानता का शत्रु मानते हैं। वे कहते हैं, पूंजीवाद, जब क्षय के दौर में नहीं होता है, मानव- जाति की असमानता का महिमा- मंडन करता है। उनकी स्थापना है कि असमानता समृद्धि के उल्टे अनुपात में बढती है।

जबकि समानताएं अन्योन्याश्रित हैं, एक समानता दूसरी पर निर्भर होती है। वर्ग में समानता की इच्छा व्यक्त होती है, वर्ण में न्याय की। आधुनिक सभ्यता को वह पूंजी व तकनीक से सृजित राक्षस बताते हुए कहते हैं- दो तिहाई दुनिया की भयंकर गरीबी तथा स्वयं यूरोपीय देशों में भी बढते उत्पादन और जीवन स्तर की कभी खत्म न हो सकने वाली भूख से उत्पन्न तनाव और सामान्य खोखलापन असहनीय होता जा रहा है।

टीएस एलियट की कविता होलो मैन की याद आ जाती है- वी आर दि होलो मैन, वी आर दि स्टफ्ड मैन।... हम अंदर से खोखले हैं क्योंकि हमारे अंतस को वस्तुओं से भर दिया गया है। निराला की कविता है- बाहर मैं कर दिया गया हूं, भीतर पर भर दिया गया हूं।❑

लेख

सात फेरों के बिना हिन्दू विवाह वैध नहीं!

आमिर अंसारी

इस रपट के लेखक आमिर अंसारी रेडियो जर्मनी से संबद्ध हैं।

सुप्रीम कोर्ट ने कहा है कि हिंदू विवाह तब तक वैध नहीं है जब तक उचित रीति-रिवाजों और समारोहों के साथ ना किया जाए। कोर्ट ने तलाक के मुकदमे में शादी प्रमाणपत्र को खारिज किया और कहा हिंदू शादी तो रीति रिवाज से ही वैध होती है।

सुप्रीम कोर्ट की जस्टिस बी वी नागरत्ना और जस्टिस ऑगस्टीन जॉर्ज मसीह की बेंच ने दो पायलटों के केस में यह आदेश दिया है। कोर्ट ने कहा है कि सप्तपदी (पवित्र अग्नि के चारों ओर सात फेरे) जैसे वैध रीति के अभाव में एक हिंदू विवाह को मान्यता नहीं दी जा सकती है।

19 अप्रैल को जारी अपने आदेश में कोर्ट ने कहा कि हिंदू विवाह अधिनियम के तहत एक जोड़े द्वारा अग्नि के चारों ओर उठाए गए सात कदम, जो एक दूसरे से किए गए सात वचनों या सिद्धांतों का प्रतिनिधित्व करते हैं, अगर ये रस्म नहीं निभाए जाते हैं तो उसे हिंदू विवाह नहीं समझा जा सकता।

सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि हिंदू विवाह नाचने और गाने, खाने और पीने या व्यावसायिक लेनदेन का अवसर नहीं है और ना ही अनुचित दबाव डालकर दहेज या उपहार मांगने का अवसर है। कोर्ट ने कहा यह एक पवित्र बंधन है जो एक महिला और पुरुष के बीच संबंध स्थापित करने के लिए है, जो भविष्य में एक विकसित परिवार के लिए पति और पत्नी का दर्जा हासिल करते हैं, जो भारतीय समाज की एक बुनियादी इकाई है।

सुप्रीम कोर्ट की बेंच ने कहा कि हिंदू विवाह एक संस्कार है, जिसे भारतीय समाज में एक महान मूल्य की संस्था के रूप में दर्जा दिया जाना चाहिए। बेंच का कहना था कि युवा पुरुषों और महिलाओं को विवाह की संस्था में प्रवेश करने से पहले ही इसके बारे में गहराई से सोचना चाहिए और यह भी जानना चाहिए कि भारतीय समाज में यह संस्था कितनी पवित्र है।

हिंदू विवाह अधिनियम के प्रावधानों पर गौर करते हुए बेंच कहा, जब तक विवाह उचित समारोहों और उचित रूप में नहीं किया जाता है, तब तक इसे अधिनियम की धारा 7 (1) के अनुसार 'संपन्न' नहीं कहा जा सकता है। बेंच ने आगे कहा, ऐसे समारोह के बिना किसी संस्था द्वारा सिर्फ प्रमाण पत्र जारी करने से न तो वैवाहिक स्थिति की

पुष्टि होगी और न ही हिंदू कानून के तहत विवाह स्थापित हो सकेगा।

सुप्रीम कोर्ट ने यह भी कहा कि विवाह रजिस्ट्रेशन का फायदा यह है कि विवादित मामले में शादी के तथ्य का प्रमाण देता है, लेकिन अगर हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 7 के मुताबिक कोई शादी नहीं हुई है तो रजिस्ट्रेशन विवाह को वैधता प्रदान नहीं करेगा।

दरअसल सुप्रीम कोर्ट की यह टिप्पणी दो पायलटों की अर्जी पर आई है। सुप्रीम कोर्ट में एक महिला ने याचिका देकर तलाक की अर्जी बिहार के मुजफ्फरपुर की एक अदालत से झारखंड के रांची की एक अदालत में ट्रांसफर करने की मांग की थी. याचिका के लंबित रहने के दौरान महिला और उनके पति ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत एक संयुक्त आवेदन दायर करके विवाद को सुलझाने का फैसला किया।

इस जोड़े की सगाई 7 मार्च, 2021 को होने वाली थी और उन्होंने दावा किया कि उन्होंने 7 जुलाई, 2021 को अपनी शादी 'संपन्न' कर ली। उन्होंने वैदिक जनकल्याण समिति से एक विवाह प्रमाण पत्र हासिल किया और इस प्रमाण पत्र के आधार पर दोनों ने उत्तर प्रदेश विवाह पंजीकरण नियम, 2017 के तहत विवाह का पंजीकरण कराया। उनके परिवारों ने हिंदू संस्कार और रीति-रिवाजों के मुताबिक विवाह समारोह की तारीख 25 अक्टूबर, 2022 तय की थी। इस बीच वे अलग-अलग रहते थे, लेकिन उनके बीच मतभेद पैदा हो गए और मामला कोर्ट जा पहुंचा।

इस याचिका पर सुनवाई करते हुए बेंच ने कहा कि जब हिंदू विवाह सात फेरों, रीति-रिवाजों और संस्कारों जैसे समारोहों के अनुसार नहीं होता है, तो उस विवाह को हिंदू विवाह नहीं माना जाएगा। कोर्ट के मुताबिक अधिनियम के तहत एक वैध विवाह के लिए अपेक्षित समारोहों का आयोजन किया जाना चाहिए और कोई मुद्दा या विवाद की स्थिति में उक्त समारोह के प्रदर्शन का प्रमाण होना चाहिए।

बेंच ने वैदिक जनकल्याण समिति द्वारा जारी प्रमाण पत्र और उत्तर प्रदेश पंजीकरण नियम, 2017 के तहत जारी 'विवाह प्रमाण पत्र' को हिंदू विवाह के प्रमाण के तौर पर अमान्य घोषित कर दिया।❑

समिति में हरित संवाद

राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति में पिछले दिनों तपोभूमि ट्रस्ट ने पर्यावरण को बचाने में युवाओं की भागीदारी के लिए दो दिवसीय संवाद का आयोजन किया।



ट्रस्ट की राज्य संयोजिका अपर्णा मक्कड़ के संयोजन में आयोजित संवाद में पहले दिन 25 मई को प्रातः समिति के उद्यान में जयपुर शहर के तरुणों के साथ प्रकृति-प्रेम पर एक अनौपचारिक चर्चा का हुई। इस संवाद में भाग उत्साह से भाग लेने वाले 50 युवा सहभागी जयपुर के विविध महाविद्यालयों के विद्यार्थी थे जिनके साथ शिक्षक, शोध सहायक एवं एक उद्यमी भी शामिल थे। उन्होंने संकल्प लिया कि वे पर्यावरण को स्वस्थ बनाने हेतु कौनसे कदम उठाना चाहेंगे उसकी रूपरेखा अगले एक महीने में तैयार कर लेंगे।

अगले दिन गांधी मार्ग पर चलते हुए पर्यावरण बचाने की मुहिम में लगे चित्तरंजन की अध्यक्षता में बैठक हुई जिसमें इंदौर, हरियाणा, बीकानेर, नागौर, नागपुर, वर्धा, लखनऊ, उड़ीसा, तमिलनाडु एवं राजकोट से आये 15 प्रतिभागियों ने अपने-अपने क्षेत्र में अपने अपने कामों की जानकारी साझा की और आ रही बाधाओं के बारे में चर्चा की। बैठक में अध्यक्ष के आग्रह पर गांव और शहर में प्रकृति-प्रेमी नेतृत्त्व को तराशने तथा स्थानीय जन- भागीदारी से समाधान खोजने की रणनीति बनाई गई।

इसके साथ ही 'हरित जयपुर' के संवाद में शहर के प्रकृति प्रेमी पर्यावरण से जुड़े मुद्दों के समाधान खोजने हेतु एकत्र हुए जिनमें प्रशासक कार्तिकेय मिश्र, पर्यावरणविद डॉ सत्यप्रकाश मेहरा, आत्मीय विश्वविद्यालय (राजकोट) के उपकुलपति प्रो शिव त्रिपाठी, विधिवेत्ता शांतनु शुक्ला, व्याख्याता, चिकित्सक, समाजसेवी आदि 25 सुधि जन शामिल थे। सबकी सहमति बनी कि प्रकृति प्रेमी हर सप्ताह समिति उद्यान में एक बार मिलें, चर्चा करें और हरे-भरे जयपुर की ओर ठोस कदम बढ़ाएं जायेंगे। अगला कार्यक्रम 6 और 7 जुलाई को रखना तय किया गया। ❑

प्रकृति

तितलियां मिटेंगी तो इंसान भी नहीं बचेगा !

तितलियां जिस प्रकार हाथ से छूटते ही फुर्र हो जाती हैं वैसे ही यदि उन्हें संभाल कर नहीं रखा तो वे प्रकृति से ही लुप्त हो जाती हैं। ऐसा हो रहा है। उन्हें बचाने की मुहिम पर एक रिपार्ट। ❑ सं.

लैटिन अमेरिकी देश इक्काडोर में स्थित अमेज़न के जंगलों में अनुसंधानकर्ताओं की एक टोली तितलियों के व्यवहार का अध्ययन कर रही है। वे कीड़ों की आबादी पर जलवायु परिवर्तन का जैसा असर देख रहे हैं, बहुत चिंताजनक है। इक्काडोर के अमेज़न जंगल में कुयाबेनो वाइल्डलाइफ रीज़र्व अपनी समृद्ध वनस्पतियों और जीवों के लिए प्रसिद्ध है। अगस्त 2003 में जीव वैज्ञानिकों और रेंजर्स की एक टोली पार्क में तितली की आबादी की निगरानी कर रही है। ऐसा इसलिए है क्योंकि तितलियां तथाकथित बायोइंडीकेटर होती है। यह शब्द उन जीवों के लिए इस्तेमाल किया जाता है जिनकी सलामती उनके आसपास के ईकोसिस्टम के सेहत के बारे में संकेत देती है।

अपने अध्ययन के लिए अनुसंधानकर्ता एक तितली को पकड़ना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने सड़ी हुई मछली और सड़े हुए केले से बना चारा देकर तितली को आकर्षित किया। ऐसा बदबूदार मिश्रण कीड़ों के लिए एक स्वादिष्ट व्यंजन जैसा होता है। इसकी गंध से वे खिंचे चले आते हैं और फिर शोधकर्ता उन कीड़ों को जाल से पकड़ पाते हैं।

अध्ययन का नेतृत्व कर रही एलिसा लेवी अपनी टीम द्वारा पकड़ी गई तितलियों की जांच करती है। शोधकर्ता चिमटी से कीड़ों को उनके छोटे पेट से सावधानीपूर्वक पकड़ते हैं और उनके पंखों पर लेबल लगाते हैं। डॉक्यूमेंटेशन के बाद अधिकांश तितलियों को छोड़ दिया जाता है।

शोधकर्ता विभिन्न तितलियों का अध्ययन कर रहे हैं। कुछ चमकीले लाल और नीले रंग की हैं जबकि किसी नमूने पर ज़ेब्रा की धारियों जैसा पैटर्न है। अन्य तितलियां कांच की तरह पारदर्शी होती हैं। इक्काडोर भले ही छोटा हो लेकिन यह एक अत्यंत प्रजाति समृद्ध





देश है, जो लगभग 4,000 तितली प्रजातियों का घर है।

लेवी बताती है कि उष्णकटिबंधीय पौधे - अलग-अलग मौसम वाले क्षेत्रों के पौधों के उलट - मौसम में अधिक बदलाव के आदी नहीं हैं। यदि वे तेजी से बदलती जलवायु के अनुकूल ढलने में असफल रहते हैं, तो ये पौधे नष्ट हो सकते हैं, और साथ ही इस तरह के तितलियों के लार्वा भी नष्ट हो जाते हैं जो उन्हें खाते हैं। और यहां यही होता हुआ देखा जा रहा है। शोधकर्ताओं ने पाया है कि केवल कुयाबेनो वाइल्डलाइफ रिज़र्व में ही प्रजातियों की संख्या में करीब दस फीसदी की कमी आई है। वहीं, तितलियों की कुल संख्या में 40 से 50 फीसदी कमी या गई है।

राजधानी क्विटो में कैथोलिक विश्वविद्यालय की जीव विज्ञानी मारिया फर्नान्डा चेका इस गिरावट को बहुत महत्वपूर्ण बताती है। अंडे से लेकर कैटरपिलर और वयस्क होने तक के अपने छोटे से जीवनकाल में तितलियां ईकोसिस्टम में होने वाले छोटे-छोटे बदलावों पर भी बहुत संवेदनशील तरीके से प्रतिक्रिया देती है। चेका ने कहा, यह गिरावट कुछ ऐसी है जो हमें चिंतित करती है।

चेका कहती है कि, अमेज़न क्षेत्र के कुछ हिस्सों में, प्रजातियों के खोज की दर विलुप्त होने की दर से धीमी है। संयुक्त राष्ट्र ने चेतावनी डी है कि 40 फीसदी अकशेरुकी परागणकर्ता - विशेष रूप से मधुमक्खियां और तितलियां - वैश्विक स्तर पर विलुप्त होने का जोखिम उठाते हैं, तो उससे खुद मानवता के लिए जोखिम पैदा होते हैं। कारण ये कि दुनिया में तीन चौथाई फल और बीज की फसलें ऐसे ही परागणकर्ताओं पर निर्भर है। ❑

गर्मी में बोगेनवेलिया की बहार

भारत में भीषण गर्मी के बीच जहां पेड़ पौधे सूख रहे हैं, वहीं दूसरी ओर सड़क के किनारे हो या फिर झाड़ियों में या फिर घर के बगीचों में, हर जगह बोगेनवेलिया के अलग-अलग रंगों के फूल अपनी छटा बिखेरते दिख जाते हैं।

झाड़ियों से लेकर हेज प्लांट, टोपियरी, क्लाइंबर या बॉर्डर - किसी भी रूप में ढल जाने वाले बोगेनवेलिया के पौधे न केवल लगाने में आसान हैं बल्कि भीषण गर्मी में भी कई तरह से प्रकृति के काम आते हैं।

मूलरूप से यह दक्षिण अमेरिका के देशों में पाया जाता है। इसकी खोज फिलबरट कॉमर्रसन और लुई एंटोनी डी बोगनविले नाम के दो वैज्ञानिकों ने की थी। इनमें से एक वैज्ञानिक के नाम पर इस पौधे का नाम रखा गया है।

दुनिया भर में बोगेनवेलिया की 1,500 से अधिक किस्में पाई जाती हैं। केवल भारत में ही इनमें से 250 से 300 किस्में पाई जाती है। आस्ट्रेलिया, चीन, ताइवान, सिंगापुर, इंडोनेशिया, फिलीपींस सहित दुनिया के कई देशों में बोगेनवेलिया की नई किस्में विकसित करने पर काम किया जा रहा है।

लखनऊ में राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान में बोगेनवेलिया की 250 से अधिक किस्में मौजूद है। इनमें से 30 किस्में एनबीआरआई ने खुद विकसित की है। बोगेनवेलिया की पत्तियां मिगट्टी और हवा के प्रदूषण को कम करने में काफी सहायक होती है इसीलिए उनकी की किस्मों को सड़क के किनारे लगाया जाता है ताकि धूल और अन्य प्रदूषक तत्वों को वह वातावरण से हटा सकें।



बोगेनवेलिया का पौधा 1,800 ईसवी में ब्राजील से युनाइटेड किंगडम और वहां से कोलकाता के एग्री-हॉर्टिकल्चर सोसाइटी में लाया गया। प्रदर्शनियां लगा कर इसकी विशेषताएं बताने और अलग-अलग क्षेत्र के लोगों को बांटने के कारण आज यह पूरे भारत में पाया जाता है।

इसकी सबसे खास बात यह है कि यह सूखाग्रस्त क्षेत्रों में आसानी से लगाया जा सकता है। सुंदर दिखने के साथ ही इसे पानी की आवश्यकता भी सबसे कम होती है। इसलिए ठंडे प्रदेशों के अलावा यह फूल पूरे भारत में खिलते देखे जा सकते हैं। बोगेनवेलिया किसी भी प्रकार की मिट्टी और जलवायु में ज़िंदा रहते हैं। इसके फूल गर्मियों में मार्च, अप्रेल और मई और फिर अक्टूबर और नवंबर में खिलते हैं। ❑

पर्यावरण

वज्रदंती – एक चमत्कारिक औषधीय पौधा

❑

देवेन्द्र भारद्वाज



राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति के उद्यान में लगे औषधीय पौधों और वृक्षों के परिचय के क्रम में हम इस बार वनस्पति विशेषज्ञ वज्रदंती की जानकारी दे रहे हैं। ❑सं

इस पौधे का नाम आपने किसी न किसी विज्ञापन में जरूर सुना होगा।

वज्रदंती एक औषधीय पौधा है। जिसका कई धार्मिक ग्रन्थों में भी जिक्र किया हुआ है। लेकिन आज बहुत ही कम लोग इस पौधे के बारे में जानकारी रखते हैं। इसको कटसरैया, पियावाशा भी कहा जाता है।

एक अनुसंधान के अनुसार, वज्रदंती पौधे के फूल, पत्ते, तने और जड़ों का उपयोग आयुर्वेद में विभिन्न औषधियों को बनाने के लिए किया जाता है। इस पौधे में लेवोनोइड्स, फेनोलिक, इरिडोइडल और फेनिलथेनॉइड ग्लाइकोसाइड्स यौगिक पाए जाते हैं। साथ ही यह एंटी-इन्फ्लेमेटरी, एंटीबैक्टीरियल, एंटीडायबिटिक, एंटीऑक्सिडेंट, एंटिफंगल, हेपेटोप्रोटेक्टिव, एंटीप्लास्मोडियल और एंटीऑक्सिडेंट गुणों का खजाना है। यह एंटीएलर्जिक, एंटीबायोटिक और एंटीवायरल भी है इसमें एल्केलॉइड, ग्लूकोसाइड और सिटो-स्टीरॉल्स पाये जाते हैं। पौधे में पोटेशियम प्रचुर मात्रा में होता है। सम्पूर्ण पौधा ही औषधीय गुणों से युक्त होता है। यह तिक्त, गरम, मधुर, चिकना केश रंजक है। यह कोढ़, वातरक्त, रक्त विकार, कफ, खुजली तथा विषनाशक है। यह केश की वृद्धि भी करता है। यह दांत दर्द, खून की कमी एनीमिया, सांप के काटने, डायबिटीज, फेफड़ों की बीमारी और खून से जुड़े रोगों के इलाज में उपयोगी हैं। दांतों के लिए वरदान कहे जाने वाले इस पौधे को हम अगर रोजाना प्रयोग में लाते हैं तो ग्रन्थों के अनुसार 100 वर्ष तक भी हमारे दांतों में किसी भी बीमारी के आने की संभावना समाप्त हो जाती है। कई कंपनियां वज्रदंती को दातों के मंजन व पेस्ट बनाने के लिए भी इस्तेमाल करती हैं। वज्रदंती से बना चूर्ण या इससे बना मंजन आपके दांतों के लिए अत्यंत लाभकारी सिद्ध होता है। इसका कारण इसमें मौजूद एंटी डॉन्टालजिक गुण आपके दांतों में हो रही सड़न, मसूड़ों की सड़न और दांत से आ रहे खून को रोकने में बेहद कारगर साबित होता हैं। गुणीजनों का मानना है कि वज्रदंती की पत्तियों को पीसकर अपने दांतों पर रगड़ा जाए तो यह दांतों का दर्द दूर करने के साथ-साथ दांतों की चमक बरकरार रखने में भी मददगार होता है।

आमतौर पर वज्रदंती में पीले रंग के फूल आते हैं। भारत में कई जगह आसानी से उपलब्ध है। वज्रदंती का वैज्ञानिक नाम (बार्लेरिया प्रायोनाइटिस Barleria prionitis) है। यह शुष्क जलवायु का पौधा है यह जंगलों तथा चट्टानों में सामूहिक रूप से पनपता है। इसको घरों और उद्यानों में भी शोभाकारी पौधे के रूप में भी उगाया जाता है। यह 1-1.5 मीटर ऊँचा होता है पत्तियों के आधार पर 3-5 तीक्ष्ण, हल्के पीले काँटे होते हैं। पुष्प कीपाकार, हल्के पीले रंग के होते हैं। इसकी चार प्रकार की जातियाँ हैं। इनके फुलों का रंग भी चार प्रकार का है। सफेद, पीले, लाल, नीले।

आर्थिक दृष्टि से इसकी खेती उपयोगी है। कहते हैं 'अति सर्वत्र वर्जेयत् ' अर्थात आवश्यकता से अधिक कोई भी कार्य नहीं करना चाहिए। इसके भी अधिक इस्तेमाल से पाचन संबंधी समस्याएं, बेचैनी महसूस होना, बार-बार डकार आना, पेट में जलन और एलर्जी जैसी समस्याएं हो सकती हैं। गुण अधिक हैं, इसीलिये वज्रदंती - एक चमत्कारिक औषधीय पौधा कहा जाता है। ❑

बायोपाइरेसी रोकने की संधि पर आखिरकार सहमति बनी

पारंपरिक ज्ञान को लुटने से बचाने के लिए संयुक्त राष्ट्र में एक अंतरराष्ट्रीय संधि पर समझौता हो गया है। संधि पर बातचीत का दौर जेनेवा में 13 मई से 24 मई तक चला जिसमें 190 से ज्यादा सदस्य देशों के प्रतिनिधि जुटे और अंततः संधि पर सहमत हो गए।

विभिन्न समुदायों और समाजों में पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ने वाले पारंपरिक ज्ञान की सुरक्षा को लेकर संयुक्त राष्ट्र की वर्ल्ड इंटेलेक्चुअल प्रॉपर्टी ऑर्गनाइजेशन ने उम्मीद जताई है कि जल्दी ही संधि पर हस्ताक्षर हो जाएंगे जिससे पेटेंट व्यवस्था में ज्यादा पारदर्शिता लाई जा सकेगी। संगठन के प्रमुख डैरेन टैंग ने कहा, यह एक ऐतिहासिक क्षण है। फ्रांसीसी प्रतिनिधि क्रिस्टोफ बिगोट ने कहा, यह बायोपाइरेसी के खिलाफ लड़ाई का मामला है ताकि जेनेटिक संसाधनों या पारंपरिक ज्ञान को बिना सहमति के उनसे लेकर कोई अन्य लाभ ना उठाए।

क्या है बायोपाइरेसी ?

बायोपाइरेसी उस ज्ञान के बिना सहमति इस्तेमाल को कहा जाता है, जो पीढ़ी दर पीढ़ी लोगों के बीच आगे बढ़ता है। जैसे कि किसी पौधे या फसल के औषधीय गुणों की जानकारी और इस्तेमाल या फिर किसी जानवर की प्रजाति का इस्तेमाल। इस तरह के नियम बनाने की कोशिश की जा रही है कि इस ज्ञान के आधार पर कोई किसी तरह की खोज को बिना उस समुदाय की सहमति के पेटेंट ना करा पाए।

दुनिया में कई बड़ी कंपनियां इस ज्ञान का इस्तेमाल दवाओं से लेकर बायोटेक्नोलॉजी, खाने का सामान या बीज विकसित करने में करती हैं। समाजसेवी संस्थाओं के मुताबिक भारत के नीम से लेकर पेरू के मक्का और दक्षिण अफ्रीका के हूदिया तक तमाम तरह के पौधे इसी ज्ञान के तहत आने चाहिए।



इस दिशा में कई छोटी-छोटी कामयाबियां भी मिली हैं। मसलन भारत में पाए जाने वाले नीम के गुणों को लेकर 1995 में केमिकल कंपनी डब्ल्यू आर ग्रेस ने एक कई पेटेंट दर्ज करा लिए थे। भारत में नीम के औषधीय और अन्य गुणों का इस्तेमाल हजारों साल से होता आया है. दस साल तक चले संघर्ष के बाद यूरोपीय पेटेंट ऑफिस ने बायोपाइरेसी को आधार मानकर नीम पर दर्ज तमाम पेटेंट खारिज कर दिए थे। यह बायोपाइरेसी के आधार पर पेटेंट खारिज होने का पहला मामला था।

डब्ल्यूआईपीओ ने संधि का जो मसौदा तैयार किया है उसमें पेटेंट के लिए अर्जी में यह बताना जरूरी होगा कि संबंधित खोज किस देश के पारंपरिक ज्ञान पर आधारित है और किस समुदाय के लोगों ने अपना पारंपरिक ज्ञान उपलब्ध कराया है।

इस संधि के विरोधियों की भी कमी नहीं है। उनका कहना है कि इससे खोज और विकास की भावना हतोत्साहित होगी। लेकिन संधि के समर्थकों का कहना है कि इससे कानूनी निश्चितता, पारदर्शिता और पेटेंट व्यवस्था की सक्षमता बढ़ेगी।

डब्ल्यूपीओ के पारंपरिक ज्ञान की देखरेख करने वाले विभाग के प्रमुख वेंड वेंडलैंड कहते हैं, इससे यह सुनिश्चित करने में मदद मिलेगी कि पारंपरिक ज्ञान और संसाधनों के इस्तेमाल के लिए संबंधित समुदायों या देशों की इजाजत ली गई हो और इस ज्ञान के आधार पर होने वाली खोजों का लाभ उन्हें भी मिले।

30 देशों में ऐसे स्थानीय कानून लागू हैं जिनके तहत किसी भी पेटेंट के लिए यह बताना जरूरी होता है कि खोज किस पारंपरिक ज्ञान पर आधारित है। इनमें भारत, चीन, ब्राजील और दक्षिण अफ्रीका जैसे विकासशील देशों के अलावा फ्रांस जर्मनी और स्विट्जरलैंड जैसे देश भी शामिल हैं। ❑

स्लेमन ने लिखी अंग प्रत्यारोपण की प्रेरणा देने वाली कहानी



अमेरिका में रिक स्लेमन की मौत हो गई है। वह पहले इंसान थे जिनके शरीर में सूअर की किडनी लगाई गई थी। इस प्रयोग को ऐतिहासिक माना गया था।

पिछले दिनों अमेरिका के बोस्टन के मैसाचुसेट्स जनरल अस्पताल ने बताया कि जीन्स में बदलाव के बाद तैयार की गई सूअर की किडनी पाने वाले 62 साल के रिक स्लेमन का निधन हो गया है। एक बयान में अस्पताल ने कहा, हमें बेहद दुख के साथ बताना पड़ रहा है कि रिक स्लेमन की अचानक मौत हो गई। हमें यह पता नहीं है कि ऐसा हाल ही में हुए प्रत्यारोपण के कारण हुआ या नहीं।

रिक स्लेमन की मार्च महीने में सर्जरी हुई थी। चार घंटे चले ऑपरेशन के दौरान उन्हें जेनेटिक मॉडिफिकेशन के जरिए इंसान के इस्तेमाल लायक बनाई गई सूअर की किडनी लगाई गई थी। उनकी दोनों किडनी एक रोग की वजह से काम करना बंद कर गई थीं।

अस्पताल ने कहा, प्रत्यारोपण के दुनियाभर के अनगिनत मरीजों के लिए एक उम्मीद की लौ के रूप में स्लेमन को हमेशा याद किया जाएगा। हम उनके भरोसे और अंग प्रत्यारोपण के क्षेत्र को आगे बढ़ाने की उनकी इच्छा के लिए उनका तहे दिल से शुक्रगुजार हैं।

मानव अंगों की कमी के कारण दुनियाभर में सालाना हजारों लोगों की मौत हो जाती है क्योंकि उन्हें सही समय पर प्रत्यारोपण के लिए अंग नहीं मिल पाते। बोस्टन अस्पताल ने बताया था कि मार्च में उसकी प्रतीक्षा सूची में 1,400 लोग थे जो किडनी मिलने का इंतजार कर रहे थे।

इस समस्या से निपटने के लिए वैज्ञानिक जानवरों की किडनी और अन्य अंगों के साथ प्रयोग कर रहे हैं। मैसाचुसेट्स की ही एक बायोटेक कंपनी ईजेनेसिस ने सूअर की किडनी में जीन्स में बदलाव किए थे ताकि उसे इंसान के शरीर में लगाया जा सके। यही किडनी स्लेमन को लगाई गई थी। इसमें से सूअर के नुकसानदायक जीन्स हटा दिए गए थे और इंसान के कुछ जीन्स जोड़े गए थे।

स्लेमन टाइप-2 डायबिटीज और हाइपरटेंशन के मरीज थे। उन्हें 2018 में इंसानी किडनी लगाई गई थी लेकिन पांच साल काम करने के बाद उस किडनी ने काम करना बंद कर दिया था। उसके बाद उन्हें इस साल सूअर की किडनी लगाई गई थी। 16 मार्च को उनके ऑपरेशन के बाद डॉक्टरों ने कहा था कि अब उन्हें डायलिसिस की जरूरत नहीं है।

उनके निधन पर उनके परिवार ने कहा कि स्लेमन की कहानी एक प्रेरणा है। अस्पताल के मुताबिक स्लेमन के परिजनों ने कहा, वह जिन वजहों से इस प्रत्यारोपण के लिए तैयार हुए थे, उनमें से एक यह भी थी कि दुनिया के उन हजारों लोगों की उम्मीद बन सकें, जिन्हें जिंदा रहने के लिए प्रत्यारोपण की जरूरत है। रिक का वह लक्ष्य पूरा हो गया और उनकी दी उम्मीद हमेशा कायम रहेगी।

सूअर की किडनी के इस्तेमाल का यह पहला मामला था लेकिन अन्य अंगों पर भी प्रयोग हो चुके हैं। 2022 में मैरीलैंड के एक व्यक्ति को सूअर का दिल लगाया गया था। इस दिल के सहारे वह दो महीने तक जीवित भी रहा। यह दिल जिस सूअर से लिया गया था, उसके जेनेटिक्स में ऐसे बदलाव किए गए थे कि वे इंसानी इम्यून सिस्टम पर अचानक हमला ना कर पाएं। अन्य जानवरों के अंगों के साथ भी इस तरह के प्रयोग किए जा रहे हैं। ❑

अंग्रेजी भाषा की चेखव ऐलिस मुनरो नहीं रहीं



नोबेल पुरस्कार विजेता लघु-कथा लेखक ऐलिस मुनरो का 13 मई को 92 वर्ष की आयु में निधन हो गया। वह साहित्य में 2013 का नोबेल पुरस्कार जीतने वाली पहली कनाडाई महिला थी।

अस्वस्थता के कारण पुरस्कार समारोह के लिए स्टॉकहोम की यात्रा न कर पाने के कारण नोबेल फाउंडेशन ने विक्टोरिया, ब्रिटिश कोलंबिया में उनकी बेटी के घर उनसे मुलाकात की और उनका एक साक्षात्कार रिकॉर्ड किया जिसमें उन्होंने कहा कि वह चाहती हैं कि उनकी कहानियां लोगों को प्रभावित करें। वह चाहती थी कि पाठक उनकी कहानी पूरी करें तो उन्हें महसूस हो कि आप एक अलग व्यक्ति हैं।

एक सामान्य गृहिणी की भूमिका में रहते हुए उन्होंने तब लिखा जब उनकी बेटियां झपकी ले रहीं होती थीं। कनाडा के उपनगरीय वैंकूवर में - खाना बनाना, सफाई करना, अपने बच्चों की देखभाल करना जैसे घरेलू कामों व्यस्त रहते हुए उन्होंने कहानियों के प्लॉट के सपने देखे। वह दैनिक जीवन की छोटी-छोटी बातों में व्यस्त रहते हुए दोपहर के सन्नाटे में अपने दिमाग में कहानियां रची और लिखी। उनकी प्रत्येक कहानी में सामान्य सांसारिक बातों जैसे कढ़ाई वाले नैपकिन, मुलेठी की बूंदें, बस डिपो से लेकर उत्कृष्ट और किसी महिला की कमर पर पुरुष का स्पर्श जैसे उदात्त अनुभव की परतें मिलती हैं। उनके पात्र अपने दर्द का सामना करने से बचने के लिए कुछ भी करते हैं।

रॉयल बीटिंग्स 1977 में 'न्यू यॉर्कर' में प्रकाशित होने वाली उनकी पहली कहानी थी; इसके बाद कई और कहानियां छपी। उनकी पहली पुस्तक, डांस ऑफ द हैप्पी शेड्स ने कनाडा का सर्वोच्च साहित्यिक पुरस्कार गवर्नर जनरल का पुरस्कार जीता। फिर भी कई लोगों ने उन्हें एक शर्मीली गृहिणी के रूप में खारिज कर दिया।

उनके कुछ सबसे समर्पित पाठक उनके साथी लेखक थे। एक अमेरिकी लेखिका सिंथिया ओज़िक ने मुनरो को हमारा चेखव कहा और भविष्यवाणी की कि वह अपने अधिकांश समकालीनों को मात देने वाली हैं। मार्गरेट एटवुड और माइकल ओन्डाटजे की तरह, उन्होंने कनाडा का नाम किया लेकिन वे उससे भी आगे निकल गईं।❏

शिक्षा की बड़ी हस्ती कावूरी का निधन



विनम्रता और करुणा से परिपूर्ण प्रतिष्ठित शिक्षिका श्रीमती पीएन कावूरी का पिछले दिनों 29 अप्रेल को जयपुर में निधन हो गया। वह 93 वर्ष की थीं।

वे 1975 से 1984 तक भारतीय विद्या भवन में वाइस प्रिंसिपल रही तथा 1984 से 1996 तक जयपुर की एसएमएस स्कूल की प्रिंसिपल रही। 1995 में उन्होंने दिशा फाउंडेशन की स्थापना की जिसके माध्यम से उन्होंने वंचित विकलांग बच्चों को सशक्त बनाने के लिए खुद को समर्पित कर दिया। 2021 में उन्होंने जयपुर स्कूल फॉर आल्टरनेटिव एज्युकेशन स्थापित किया।

समावेशी शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए उनके निस्वार्थ समर्पण और अटूट प्रतिबद्धता को हमेशा याद किया जाएगा। श्रीमती कावूरी के प्रेरक व्यक्तित्व ने कई लोगों के जीवन को प्रभावित किया। ❏

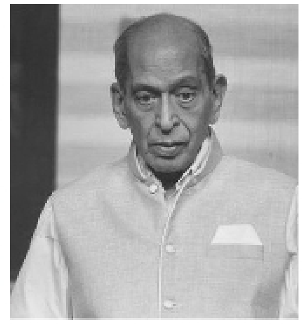
स्मृति शेष

शिक्षा के क्षेत्र से जुड़े बैंकर वाघुल का निधन

जाने-माने बैंकर एन. वाघुल का पिछले दिनों चेन्नई में निधन हो गया। वह 88 वर्ष के थे।

बैंकिंग उद्योग में कई नेतृत्वकारी पदों पर रहे वाघुल को 1985 में अध्यक्ष और प्रबंध निदेशक के रूप में अपने 11 साल के कार्यकाल में आईसीआईसीआई को एक सार्वजनिक वित्त संस्थान से एक सफल निजी क्षेत्र के बैंक में बदलने का श्रेय दिया जाता है। उन्हें 2006 में देश के तीसरे सर्वोच्च नागरिक पुरस्कार पद्म भूषण से सम्मानित किया गया था।

वाघुल ने कॉर्पोरेट क्षेत्र में परोपकार भावना को बढ़ाने में सक्रिय भूमिका निभाई और शिक्षा पर काम करने वाले देश के महत्वपूर्ण निकाय 'प्रथम' से गहराई से जुड़े रहे। एक समय पर, उन्होंने 'प्रथम इंडिया एजुकेशन इनिशिएटिव' के बोर्ड में मुकेश अंबानी, अजय पीरामल, कुमार मंगलम बिड़ला, गौतम थापर और एल एन मित्तल जैसे उद्योग जगत के प्रमुखओं को शामिल किया।



एक ग्रामीण परिवार से आने वाले वाघुल मद्रास विश्वविद्यालय के स्नातक थे। उन्होंने कॉर्पोरेट जगत की कई कंपनियों तथा बोर्डों में अपनी सेवाएं दी और राष्ट्रीय बैंकिंग प्रबंधन संस्थान में शिक्षण भी किया।

वाघुल जब 44 साल की उम्र में बैंक ऑफ इंडिया के अध्यक्ष और प्रबंध निदेशक बने तब वह किसी सार्वजनिक क्षेत्र की बैंक का नेतृत्व करने वाले सबसे कम उम्र के प्रमुख थे। महिंद्रा समूह के अध्यक्ष आनंद महिंद्रा ने उन्हें भीष्म पितामह कहा और उन्हें जानने और उनके द्वारा निर्देश में काम करने पर खुद को धन्य माना। ❑

स्वत्त्वाधिकारी राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति द्वारा क्लासीफाइड प्रिण्टर्स, जयपुर में मुद्रित तथा 7-ए, झालाना संस्थान क्षेत्र, जयपुर-302004 से प्रकाशित। संपादक- राजेन्द्र बोड़ा